मुहम्मद सल्ल॰ और भारतीय समाज

अबुज़र कमालुद्दीन



स्टूडेंट्स इस्लामिक पब्लिकेशन्स

मुहम्मद (सल्ल०) और भारतीय समाज
अबुज़र कमालुद्दीन

नाम किताब	:	हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) और भारतीय समाज
लेखक	:	अबूज़र कमालुद्दीन
प्रकाशक	:	स्टूडेण्ट्स इस्लामिक पब्लिकेशन्स
प्रथम संस्करण	:	१९९४
मूल्य	:	Rs 25
मिलने के पते	:	(१) स्टूडेण्ट्स इस्लामिक पब्लिकेशन्स २३०, अबुल फ़ज़ल इन्कलेव, जामिया नगर, नई दिल्ली-२५
		(२) मर्कज़ी मक्तबा इस्लामी, १३५३, चितली क़ब्र, दिल्ली-११०००६

क़ुरआन की वाणी

"(आज यह दयालुता उन लोगों का हिस्सा है) जो इस पैग़म्बर उम्मी नबी (सल्ल०) का अनुसरण करें, जिसका उल्लेख उन्हें अपने यहाँ तौरात और इंजील में लिखा हुआ मिलता है। वह उन्हें अच्छे काम का आदेश देता है और बुरे काम से रोकता है और पाक चीज़ों को उनके लिए हलाल करता है और नापाक चीज़ों को उन पर हराम ठहराता है और उन पर से उनके बोझ उतारता है और वह बंधन खोलता है जिसमें वे जकड़े हुए थे। जो लोग उन पर ईमान लायें और सहायता और समर्थन करें और उस प्रकाश का अनुसरण करें, जो इसके साथ अवतरित हुआ है, वही सफल होने वाले हैं। ऐ मुहम्मद ! कह दो कि लोगो ! मैं तुम सबकी तरफ़ उस अल्लाह की ओर से भेजा गया रसूल हूँ, जो आसमानों और ज़मीन का बादशाह है। उसके सिवा कोई ईश्वर नहीं, वही जीवन प्रदान करता है और वही मौत देता है। अतः मानो अल्लाह को और उसके भेजे हुए उम्मी नबी को, जो अल्लाह और उसकी बातों को मानता है और उसके अनुयायी बनो। आशा है कि तुम सीधा मार्ग पा लोगे।" —क़ुरआन ७ : १५७-१५८

समर्पण

उन भाइयों के नाम,
जो जीवन-निर्माण
और
लोक-कल्याण के लिए
एक आदर्श की
खोज में हैं।

विषय-सूची

क्या	कहाँ

क्या	कहाँ

लेखक की ओर से

प्रस्तुत पुस्तिका "हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) और भारतीय समाज" ईश्वर के अंतिम पैग़म्बर के जीवन-चरित्र तथा उनकी शिक्षाओं का संक्षिप्त संकलन है। इसका मुख्य उद्देश्य अपने हिन्दी-भाषी भाइयों के सामने सरल तथा सुबोध भाषा में हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के भव्य एवं बहुमुखी व्यक्तित्व की एक झलक प्रस्तुत करना है। आप (सल्ल०) जितने महान् व्यक्ति हैं, उतनी ही आपके प्रति अनेक प्रकार की ग़लतफ़हमियाँ फैलाने की कोशिशें की गई हैं। इन कुप्रयासों का स्पष्ट उद्देश्य यह है कि लोगों को इस दिव्य ज्योति के समीप आने से रोका जाये। इस सम्बन्ध में कुछ पाश्चात्य विद्वानों और हमारे देश के कुछ लोगों ने तरह-तरह से आपके व्यक्तित्व तथा आचरण को लांछित करने का प्रयास किया है, परन्तु ये सारी कोशिशें बिल्कुल ऐसी ही हैं, जैसे कोई सूरज पर थूकने का प्रयास करे या दिन के उजाले में आंखें बंद करके चलने के लिये विवश हो।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के जीवन और चरित्र पर हिन्दी में बहुत-सी किताबें लिखी गई हैं, जिनकी अपनी-अपनी उपयोगिता है। परन्तु मेरी जानकारी में ऐसी कोई पुस्तक नहीं है, जो आपके जीवन के साथ-साथ इस्लाम के मौलिक सिद्धान्तों का भी परिचय कराती हो तथा भारतीय संदर्भ में उठने वाले अनेक प्रश्नों का सन्तोषजनक उत्तर भी देती हो। मेरी यह पुस्तिका इस ओर एक प्रयास मात्र है। मुझे नहीं मालूम कि मैं अपनी इस कोशिश में कितना सफल हुआ हूँ, किन्तु आशा अवश्य की जा सकती है कि इस के अध्ययन से हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) और इस्लाम के प्रति पाठकों को अपनी बहुत सी ग़लतफ़हमियों को दूर करने में मदद मिलेगी और उन्हें आप (सल्ल०) के व्यक्तित्व तथा शिक्षाओं को निष्पक्ष रूप में देखने और समझने का अवसर प्राप्त होगा।

इस पुस्तक के छः अध्याय हैं। प्रथम अध्याय में प्राक्कथन के अन्तर्गत हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के जीवन, व्यक्तित्व तथा आप (सल्ल०) की महान् उपलब्धियों के सम्बन्ध में विश्व के महान् विचारकों, दार्शनिकों, इतिहासकारों आदि की उक्तियाँ उद्धृत की गयी हैं और उनके आधार पर आप (सल्ल०) के व्यक्तित्व की एक झलक दिखाई गई है।

दूसरे अध्याय में धर्म की उत्पत्ति और प्रकृति, मानवता के स्रोत, इस्लाम का अर्थ, हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की विशेषता और ऐतिहासिक घटना-क्रम के आधार पर नुबूवत के पूर्व और बाद की घटनाओं के संदर्भ में आपके जीवन तथा चरित्र का संक्षिप्त परिचय कराया गया है।

तीसरे अध्याय में आपकी शिक्षाओं के क्रम में एकेश्वरवाद, ईशदूतत्व और परलोकवाद के साथ-साथ इस्लाम के आध्यात्मिक आधारों की चर्चा की गई है और इस संबंध में बहुत-सी ग़लतफ़हमियों को दूर करने का प्रयास किया गया है।

चौथे अध्याय में आपके द्वारा गठित समाज की विशेषताओं का बहुत ही संक्षेप में उल्लेख किया है, जिसको पढ़कर आपको यह मालूम हो सकेगा कि इस्लाम ने मानवता की भलाई और उत्थान के लिए क्या भूमिका निभाई है और आज की कल्याणकारी विचारधारा का स्रोत क्या और कहाँ है?

पांचवें अध्याय में ग़ैर मुस्लिमों के साथ, चाहे वे दोस्त हों या दुश्मन, आज़ाद हों या ग़ुलाम, क़ैदी हों या स्वतंत्र, कमज़ोर हों या बलवान, आप (सल्ल०) का व्यवहार कैसा रहा, इसका उल्लेख किया गया है।

छठे अध्याय में जीवन के विभिन्न पहलुओं से संबंधित हज़रत मुहममद (सल्ल०) की शिक्षाओं तथा उपदेशों का संक्षिप्त संकलन पेश किया गया है, जिससे एक बात स्पष्ट हो जाती है कि इस्लाम का मतलब सिर्फ़ एक धर्म नहीं है, बल्कि यह एक संपूर्ण जीवन-व्यवस्था है, जो व्यक्ति से लेकर समाज तक, जीवन के हर मैदान और हर हिस्से को अपने अधीन लेकर उसके आधार पर मानव-जीवन, सभ्यता तथा संस्कृति का निर्माण करता है।

यह पुस्तिका एक पवित्र उद्देश्य के साथ पाठकों के सामने है। मैं अपने प्रयास में कितना सफल हुआ हूँ, इसका फ़ैसला तो केवल आप ही कर सकते हैं। मैं दुआ करता हूँ कि अल्लाह इस पुस्तिका को हमारे लिये भलाई और लोगों के लिये हिदायत का ज़रिया बनाए। आमीन! अन्त में, मैं उन सभी सज्जनों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ, जिनकी किताबों से मैंने मदद ली है।

– अबूज़र कमालुद्दीन

दो शब्द

आज भौतिकता का युग है। विश्व में नित नयी वैज्ञानिक प्रगति हो रही है। सुख-सुविधा की 'सामग्री' का कल्पनातीत आविष्कार हुआ है और हो रहा है। इंसान के पास उसके अपने आराम की अब तमाम चीज़ें मौजूद हैं, फिर भी यह कटु सत्य है कि उसे सुख-चैन नसीब नहीं हो पा रहा है। उल्टे उसके लिए तरह-तरह की नयी समस्याएं उत्पन्न हो गयी हैं। भौतिकता और उपयोगितावाद की यह आंधी नैतिक मूल्यों के स्तम्भों को तो धराशाई कर ही रही है, इससे इंसान की चारित्रिक बुनियाद भी हिल गयी है।

यह कहने में ज़रा भी संकोच नहीं है कि अपने देश—भारत की स्थिति काफ़ी विकट है। पूरा देश समस्याओं के जाल में फंसा हुआ है – पग-पग पर समस्याएं मुंह बाये खड़ी हैं। शिक्षा का गिरता स्तर और उसके नतीजे में बेरोज़गारी, जीवन-मूल्यों से रहित भटकती युवा पीढ़ी, साम्प्रदायिकता का उफनता ज़हर, दहेज-प्रथा, कमज़ोर वर्ग पर ज़ोर-ज़बरदस्ती का दौरदौरा, बढ़ते बाल-अपराध, डग भरते आर्थिक घोटाले, सरकारी कर्मचारियों की गिरती साख और सार्वजनिक जीवन में बढ़ती अनियमितता आदि कितनी ही ऐसी समस्याएं हैं, जो समय बीतने के साथ तू डाल-डाल, मैं पात-पात की कहावत चरित्रार्थ कर रही हैं। इनके हल के लिए दिनानुदिन नयी नीतियां, कार्यक्रम, बोर्ड और आयोग बनते हैं, फिर भी इन पर लगाम नहीं लग पा रहा है। क्या कारण है कि करोड़ों रुपये ख़र्च करने के बाद भी ढाक के तीन पात ही मिलते हैं? आख़िर इनका सही हल क्या है?

इन समस्याओं के समाधान और वास्तविक सुख-शान्ति के लिए हमें मौलिक आत्मगुण को अपनाना होगा, उसे विकसित करना होगा। अपने प्रयासों में इस गुण की सार्थक सहभागिता लानी होगी। कृत्रिम आत्मगुण या समयानुसार मान लिये गये आत्मगुण से काम नहीं चलेगा। इस कृत्रिमता का जो नतीजा सामने आ

रहा है, उसे हम-आप देख ही रहे हैं। जो चीज़ें पहले मानव-प्रकृति के विरुद्ध थीं, उन्हें आज सामाजिक मान्यता देकर मानव-प्रकृति के अनुकूल बनाने की कुचेष्टा की जा रही है। ऐसे फ़र्ज़ी आत्मगुण की हमें ज़रूरत नहीं है, जो हमें पतनशीलता की ओर ले जाये। ज़रूरत है मौलिक और शाश्वत आत्मगुण की, जो कि मानव-व्यक्तित्व में आते ही उसकी सारी समस्याएं दूर कर उसे सुखमय जीवन प्रदान कर देता है।

अब प्रश्न यह है कि इस गुण की तलाश कैसे की जाय और क्या कोई इसका आदर्श है, जिसे हम स्वीकार करें? जी हां, इसकी तलाश भी आसान है और आदर्श की प्राप्ति भी सरल है। इसके लिए बस इतना करना है कि हम सभी प्रकार के पूर्वाग्रहों को अपने से दूर भगा दें, फिर निष्पक्षता और गंभीरता के साथ इसकी तलाश करें। स्पष्ट है कि यह आत्मगुण अप्रामाणिक तथ्यों से नहीं जान सकते। उन चीज़ों और साधनों से भी नहीं जान सकते, जिनमें समयानुसार परिवर्तन किये जाते रहे हैं। हम केवल उस पुस्तक या जीवन-चरित्र से यह आत्मगुण जान सकते हैं और उसे अपना आदर्श मान सकते हैं, जिसमें आज तक कोई हेर-फेर या परिवर्तन न हुआ हो और वह स्वयं सिद्ध हो। इसके लिए जब हम विश्व के मानचित्र पर दृष्टिपात करते हैं, तो पुस्तक के रूप में क़ुरआन मिलता है, जिसमें उसके अवतरणकाल से लेकर आज तक कोई हेर-फेर या परिवर्तन नहीं हुआ है और इस ईश्वरीय पुस्तक के लिए ऐसी व्यवस्था कर दी गयी है कि क़ियामत तक यह अक्षरशः अपने मूल-स्वरूप में रहेगी। इसके अलावा जीवन-चरित्र के रूप में इस्लाम के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की पवित्र जीवनी ही मिलती है, जो कि पूर्णतः प्रामाणिक और ऐतिहासिक है। इस सन्दर्भ में इस्लाम-विरोधियों ने भी साक्ष्य दिये हैं। क़ुरआन और अल्लाह के अन्तिम पैग़म्बर (सल्ल०) की पवित्र जीवनी ही हमारे लिए मौलिक आत्मगुण का स्रोत है। इंसान नहीं बता सकता कि इंसान का मौलिक और शाश्वत आत्मगुण क्या है। इसके लिए ईश्वरीय मार्गदर्शन की ज़रूरत है।

प्रस्तुत पुस्तक में लेखक ने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) की पवित्र जीवनी के कुछ महत्वपूर्ण पहलू पेश किये हैं। साथ ही, इस्लाम की आधारभूत शिक्षाओं का

भी उल्लेख किया है। मेरा विश्वास है कि यह पुस्तक उन सभी आपत्तियों और ग़लतफ़हमियों को दूर करने में काफ़ी हद तक सहायक होगी, जो भारतीय समाज में इस्लाम के विषय में फैली हुई हैं। इस पुस्तक में आपको ऐसे अनमोल मोती मिलेंगे, जिन्हें ग्रहण कर कोई भी व्यक्ति अपने व्यक्तित्व को सजा-संवार सकता है। इन मोतियों को ग्रहण करने वाले का व्यक्तित्व ऐसा-वैसा नहीं होगा, बल्कि इस प्रकार अलंकृत होगा कि उसके निकट न तो समस्याएं अपने डैने फैलायेंगी और न ही निराशा, हताशा और अशांति होगी। उसे वास्तविक सुख-चैन प्राप्त होगा।

भवदीय

दिनांक
१९ जुलाई, १९९३ ई०

मुहम्मद अहमद
मास्टर आफ़ जर्नलिज़्म (एम०जे०)
सी—२३०, अबुल फ़ज़्ल इन्कलेव
ओखला, नयी दिल्ली-२५

शब्द संकेत : एक दृष्टि में

सल्ल०— सल्-लल्-लाहु अलैहि वसल्लम अर्थात् उन पर अल्लाह की रहमत और सलामती हो। यह वाक्य हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के लिए विशिष्ट हो गया है। जब आप (सल्ल०) का नाम लेते या सुनते हैं, तो आदर और प्रेम के साथ दुआ के ये शब्द बढ़ा देते हैं।

रज़ि०— रज़िअल्लाहु अनहु अर्थात् उनसे अल्लाह राज़ी रहे। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के किसी साथी का नाम आता है, तो आदर और प्रेम के लिए दुआ के ये शब्द जोड़ देते हैं।

अ०— अलैहिस्सलाम अर्थात् उन पर सलामती हो। नबियों या फ़रिश्तों के नाम आते हैं, तो उनके प्रति आदर और प्रेम व्यक्त करने के लिए दुआ के ये शब्द बढ़ा देते हैं।

(अल्लाह , रहमान और रहीम के नाम से)
पहला अध्याय

मत-अभिमत

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) और ग़ैर मुस्लिम विद्वान्

आप चाहे हिन्दू हों, मुसलमान हों, सिख हों या ईसाई हों, जैन मतावलम्बी हों या बौद्ध, आस्तिक हों या नास्तिक, किसी धर्म पर विश्वास रखते हों या धर्म-विरोधी हों, समाजवादी और साम्यवादी हों या रूढ़िवादी या पूँजीवादी, आप इस बात को निश्चित रूप से मानेंगे कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) मानव-इतिहास की महान् विभूति हैं। निस्सन्देह, आप (सल्ल०) ने मानव-समाज को एक नई दिशा दी है और एक ऐसी वैचारिक तथा व्यावहारिक क्रान्ति उत्पन्न की, जो विश्व-इतिहास में अद्वितीय है। बॉसवर्थ स्मिथ (Bosworth Smith) ने आप (सल्ल०) की ऐतिहासिक भूमिका पर प्रकाश डालते हुए कहा है—

"भाग्यवश, मुहम्मद (सल्ल०) तीन-तीन चीज़ों के संस्थापक हैं— एक राष्ट्र, एक राज्य और एक धर्म, जो मानव-इतिहास में सर्वथा अद्वितीय है.... और आज भी दुनिया की १/६ आबादी द्वारा यह पवित्रता, शिष्टाचार, बुद्धि तथा सत्य के आश्चर्य-प्रमाण के रूप में श्रद्धा की दृष्टि से देखे जाते हैं।"

यह उद्गार है उनका, जिन्होंने थोड़ा निष्पक्ष भाव से हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के पवित्र जीवन का अवलोकन और अध्ययन किया है, लेकिन सोचने की बात यह है कि यह सबकुछ अचानक नहीं हुआ, न यह कोई जादूगरी थी और न कोई धोखा, बल्कि इन सबके पीछे एक अद्भुत व्यक्तित्व, एक ठोस चरित्र, एक मनमोहक आचरण, पहाड़ जैसी सहनशीलता और समुद्र जैसी उदारता थी। हर बात के पीछे एक व्यावहारिकता थी और अनुकरण-योग्य सरल सीधी शिक्षाएं

थी, जिनको मानना और अपनाना मुश्किल न था और आज भी वे शिक्षाएं जीवन्त हैं। वर्तमान समय में डेढ़ सौ करोड़ लोगों का एक विशाल मानव-समुदाय आपकी बातों पर जान छिड़कता है। मानव-इतिहास में किसी धर्म-गुरु का उतना सम्मान एवं आदर नहीं किया जाता, जितना मुहम्मद (सल्ल०) के अनुयायी अपने नबी का करते हैं।

महान् चिन्तक और विचारक टॉमस कारलायल (Thomas Carlyle) ने बहुत-सी ग़लतफ़हमियों का खंडन करते हुए लोगों को एक निष्पक्ष दृष्टिकोण अपनाने का सुझाव दिया है। उन्होंने लिखा है—

"मुहम्मद (सल्ल०) के प्रति हमारा वर्तमान अनुमान कि वे एक छल करने वाले पाखंडी, एक झूठे अवतार और उनके द्वारा चलाया गया धर्म मात्र धोखे और झूठ का पुलिंदा है, यह ग़लतफ़हमी जो जान-बूझकर बड़े जोश व ख़रोश के साथ इस व्यक्ति के विषय में फैलायी गई है, स्वयं हमारे लिये अपमानजनक है।.... वास्तव में वह समय आ गया है कि इन सबको परे कर दिया जाय। वे बिल्कुल अतर्कसंगत हैं। उनके कथन का प्रत्येक शब्द गत बारह सौ वर्षों से लेकर आज तक (मौजूदा १८० मिलियन) लोगों का मार्ग-दर्शन करता आ रहा है।"

आगे चलकर टॉमस कारलायल विस्मित होकर कहता है—

"किस प्रकार एक व्यक्ति ने अकेले ही आपस में लड़ते-झगड़ते क़बीलों और बद्दूओं को एक सशक्त और सुसभ्य राष्ट्र में बदल दिया और यह महान् कार्य आप (सल्ल०) ने केवल २३ वर्ष की छोटी-सी अवधि में पूरा किया।"

मेजर आर्थर लियोनार्ड (Arthur Leonard) आप (सल्ल०) के अद्भुत और महान् व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हुए कहता है—

"यदि कभी मनुष्य ने एक अच्छे और महान् उद्देश्य के साथ ईश्वर की सेवा में अपना जीवन समर्पित किया है, तो निश्चित रूप से

वह व्यक्ति अरब के ईश-दूत हैं। वह न केवल महान् हैं, बल्कि महानतम् हैं : सबसे सत्यनिष्ठ व्यक्ति हैं, जिसने इस धरती पर जन्म लिया।"

सब जानते हैं कि बर्नार्ड शॉ (Bernard Shaw) एक महान् दार्शनिक, लेखक और नाटककार है। वह किसी धर्म में विश्वास नहीं रखता। परन्तु जब इस्लाम और मुहम्मद (सल्ल०) का ज़िक्र आता है तो वह गौरवगान करते हुए कहता है–

"मैं मुहम्मद (सल्ल०) द्वारा प्रस्तुत धर्म को हमेशा अत्यधिक सम्मान की दृष्टि से देखता हूँ, क्योंकि इसमें आश्चर्यजनक जीवन-शक्ति पाई जाती है। यह वह एकमात्र धर्म है जो मेरे नज़दीक जीवन की बदलती परिस्थितियों में अपने अन्दर सबको जोड़े रखने की योग्यता रखता है और जो हर ज़माने के लिए अपने अन्दर एक अपील रखता है। दुनिया निःसन्देह मेरे जैसे महान् व्यक्तियों की भविष्यवाणी को बड़ी अहमियत देती है। मैंने पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) के धर्म के बारे में भविष्यवाणी की है कि वह आने वाले समय में यूरोप के लिए मान्य होगा, जैसे कि आज के यूरोप के लिये यह मान्य होता जा रहा है। मध्यकालीन पादरियों ने या तो अज्ञानतावश या फिर धर्मान्धता के कारण मुहम्मद साहब के धर्म को अत्यन्त कुरूप रंगों में पेश किया। वास्तव में, वे इस बात के लिए प्रशिक्षित किये गये थे कि वे मुहम्मद (सल्ल०) और उनके धर्म से नफ़रत करें। उनकी दृष्टि में मुहम्मद (सल्ल०) ईसाई के विरुद्ध थे। मैंने इस आश्चर्यजनक विभूति का अध्ययन किया है और मेरे विचार से आप (सल्ल०) के ईसा के विरोधी होने की बात तो दूर है, उन्हें मानवता का रक्षक कहना चाहिए। मेरा विश्वास है कि अगर उनके जैसे किसी व्यक्ति को आधुनिक दुनिया का प्रशासक बना दिया जाय तो वह समस्याओं का इस प्रकार समाधान करने में सफल होगा कि

दुनिया को आवश्यक शांति और ख़ुशहाली नसीब होगी।"

मुहम्मद (सल्ल०) केवल मुसलमानों के ही नबी नहीं हैं, बल्कि वह ईश्वर की ओर से सम्पूर्ण विश्व के लिए एक वरदान हैं। क़ुरआन पुकार कर कहता है–

"हे नबी ! हमने तुमको दुनिया वालों के लिए रहमत (दयालुता का प्रतीक) बनाकर भेजा है।" — २१:१०७

क़ुरआन ने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि 'हे नबी ! हमने तुमको सम्पूर्ण मानव-जाति के लिए शुभ सूचनाएं देने वाला और डराने वाला बनाकर भेजा है, परन्तु अधिकांश लोग जानते नहीं हैं।'

इस प्रकार हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) का जीवन मानव-जाति के लिए एक वरदान है और ईश्वर की अनुकम्पा एवं दयालुता का प्रतीक है। इस स्थिति में आपके व्यक्तित्व और आपकी शिक्षाओं की अवहेलना करना वास्तव में अपने आपको ईश्वरीय वरदान से वंचित रखना है।

अल्लाह ने जहां आप (सल्ल०) के और बहुत-से गुणों का वर्णन किया है, वहीं यह बात भी बहुत ज़ोर देकर कही गई है कि मानवता बहुत सारे बोझों से दबी हुई है। उनसे उसको छुटकारा दिलाना आपका मुख्य कार्य है। मनुष्य के जीवन को जटिलताओं, बाधाओं, बंधनों और कुंठाओं से मुक्त करके उसे सहज एवं सरल बनाया है। यही कारण है कि इस्लाम ने उन बहुत-सी कुरीतियों को ख़त्म कर दिया, जो ईश्वर और मनुष्य के बीच तथा मनुष्य और मनुष्य के बीच बाधाएं बन कर खड़ी हो रही थी। इतिहासकार डॉ० ताराचन्द इस्लाम की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं–

"इस्लाम विश्व के हृदय-पटल पर सरल सूत्रात्मक, धार्मिक नियमों और रीतियों की पूर्ण पारिभाषित विधियों तथा सामाजिक संस्थानों के प्रजातंत्रात्मक सिद्धांतों के रूप में प्रकट हुआ है।"

आगे चलकर डॉ० ताराचन्द हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की शिक्षाओं का उल्लेख करते हुए कहते हैं–

"जिस धर्म का आप (सल्ल०) ने प्रचार किया वह अत्यन्त सरल

था। इसमें अल्पतम धार्मिक विधान और रीति-रिवाज माने जाते थे, क्योंकि क़ुरआन के अनुसार, ईश्वर मनुष्य पर पड़े हुए बोझ को हल्का और आसान करना चाहता था। इसका केन्द्रीय सिद्धान्त ईश्वर की एकता (अर्थात् वह एक है) और सर्वाधिक महत्वपूर्ण धार्मिक कार्य प्रतिदिन पांच समय की नमाज़, साल में रमज़ान के महीने भर का रोज़ा, जमा निधि पर ढाई प्रतिशत के हिसाब से ज़कात, जीवन में एक बार सामर्थ्य रखने वाले व्यक्तियों को हज करना है। ये इस्लाम के स्तम्भ हैं। सामाजिक पक्ष में इसकी सबसे अधिक मनभावन विशेषता मुसलमानों की समानता और बन्धुत्व पर ज़ोर है तथा इस्लाम समाज में किसी धार्मिक वर्ग की अनुपस्थिति है।"

कुछ लोग समझते हैं कि आपने अपना धर्म ज़ोर-ज़बरदस्ती और तलवार के बल पर फैलाया है। यह बात कदापि सत्य नहीं है। तलवार के बल पर धरती तो जीती जा सकती हैं, लोगों को गुलाम तो बनाया जा सकता है, लेकिन उनकी धारणायें एवं आस्थाएं नहीं बदली जा सकतीं। इसलिये क़ुरआन स्पष्ट शब्दों में कहता है–

"यह तो एक याददहानी है, जिसका जी चाहे माने जिसका जी चाहे न माने।"

अल्लाह ने नबी (सल्ल०) को स्पष्ट आदेश देते हुए कहा–

"तुम लोगों पर दारोग़ा बना कर नहीं भेजे गये हो। तुम्हारा काम केवल लोगों तक अपनी बात पहुंचा देना है।"

एक दूसरी जगह क़ुरआन में है–

"धर्म में कोई ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं है।"

अतः इस्लाम जिस चीज़ से फैला वह तलवार की शक्ति नहीं थी, बल्कि वह इस्लाम की सीधी-सच्ची शिक्षाएं थीं; मुहम्मद (सल्ल०) का मनमोहक आदर्श चरित्र था; आपकी दयालुता और निष्ठा; आपका मानव-प्रेम था; आपकी अपने जानी दुश्मनों तक को माफ़ कर देने की विशाल हृदयता थी। जॉर्ज सेल

(George Sale), जिन्होंने क़ुरआन का अंग्रेज़ी में अनुवाद किया है, अपने प्राक्कथन में लिखते हैं–

"मुहम्मद (सल्ल०) ने विशुद्ध ढंग से अपना धर्म-प्रचार किया। मदीना जाने से पूर्व आपके साहसिक प्रयत्नों की सारी सफलता ज़ोर-ज़बरदस्ती से नहीं, बल्कि निश्चित रूप से प्रेरणा द्वारा प्राप्त की गई है। . . . . . आपको किसी बल प्रयोग का कतई कोई आदेश नहीं था। आपने घोषणा की कि मेरा कार्य केवल धर्म-प्रचार है और इसको न मानने की स्थिति में आने वाली यातनाओं से डराना है। मुझे यह अधिकार नहीं है कि मैं उन्हें दीन (इस्लाम) का अनुयायी बनाने के लिए उन पर ज़ोर-ज़बरदस्ती करूं। लोग मानते हैं या नहीं मानते हैं, इससे मुझे कोई मतलब नहीं। यह केवल अल्लाह का काम है। आपने अपने अनुयायियों को बल प्रयोग के बदले उनके ईमान के कारण दिये गये दुःखों को धैर्य से सहन करने की सलाह दी और जब स्वयं आप (सल्ल०) के सामने यह स्थिति उत्पन्न हुई, तो उसका प्रतिरोध करने के बजाय आप (सल्ल०) अपने जन्म-स्थान को छोड़कर मदीना चले गये।"

यह तो उन दिनों की बात है जब इस्लाम को शक्ति और सत्ता प्राप्त न थी। अब यह देखिये कि जब इस्लाम विजयी हुआ तो उस समय आप (सल्ल०) की नीति और व्यवहार का क्या रंग रहा। सर विलियन मुकिर (Sir Willian Mucir) 'The Life of Muhammad' में लिखते हैं–

"मक्का वाले जिस तरह लम्बे समय तक आपके दावों के विरुद्ध हठधर्मी से जंग करते रहे, उस पर विजय प्राप्त करने वाला कोई भी व्यक्ति अपने अपमान का बदला आग और ख़ून के रूप में इस तरह लेता कि उसके चिह्न हमेशा के लिये अमिट हो जाते, परन्तु मुहम्मद (सल्ल०) ने केवल कुछ अपराधी व्यक्तियों को छोड़कर सार्वजनिक माफ़ी की घोषणा की और अतीत में अनेक अपमानों, हंसी मज़ाक़ और उनके द्वारा पहुंचाये दुखों और कड़ुवी यादों को बड़ी विनम्रता के साथ भुला दिया, बल्कि अपने कट्टर दुश्मनों के साथ उदारता और मित्रता का

व्यवहार किया। उन्होंने अब्दुल्लाह बिन उबई और मदीना के अन्य उन लोगों, जो इस्लाम से दूर थे, के संबंध में जो सहनशीलता दिखलाई है, वह कम अहम नहीं है, उन लोगों ने लगातार कई वर्षों तक आपके उद्देश्यों को विफल करने का प्रयास किया और विरोध करते रहे।"

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) का जीवन-चरित्र केवल एक जाति, एक देश और एक समाज के लिये नहीं है। आपका जीवन मानव-समाज के सर्वांगीण विकास के लिए एक अमर सूत्र है। आपका बहुमुखी व्यक्तित्व सबके लिए एक नमूना है। आपका जीवन एक ऐसा आदर्श है, जो यह निर्धारित करता है कि सांसारिक जीवन का वास्तविक लक्ष्य क्या है? आप केवल अच्छे सिद्धान्तों के प्रचारक नहीं थे, बल्कि एक सफल समाज-सुधारक, एक नैतिक प्रशिक्षक, एक राजनैतिक चिन्तक, एक योग्य एवं कुशल सेनापति, एक निष्ठावान मित्र, एक आदर्श पति और स्नेह से परिपूर्ण पिता भी थे। मानो एक अकेले व्यक्ति में संसार में सारे गुण जमा हो गये थे। अतः आपके जीवन में सभी लोगों के लिए एक नमूना मौजूद है।

आपके इन गुणों के कारण आपका चरित्र सदा के लिए और सभी के लिए अनुकरणीय है। इसीलिये फ्रान्स का महान् शासक और विजेता निपोलियन बोनापार्ट और गांधीजी हमेशा एक ऐसे समाज का सपना देखते रहे, जिसने चौदह सौ साल पहले लाई गयी क्रान्ति के नतीजे में जन्म लिया था।

आपके प्रतिभाशाली व्यक्तित्व और अद्भुत राफलता पर प्रकाश डालते हुए एलफ्रेड डब्ल्यू० मारटिन ने कहा—

> "मुहम्मद (सल्ल०) ने अपने समय और देश के परस्पर विरोधी अरब समुदायों को धार्मिक एकता के सूत्र में जोड़ कर उन्हें मौलिक तथा धार्मिक रूप में बहुत ऊँची सतह पर पहुंचा दिया। ऐसी सफलता न तो यहूदी धर्म को मिली और न मध्य कालीन अरब में ईसाई धर्म को प्राप्त हुई और उनको अपने उद्देश्यों की पूर्ति तथा उच्च धार्मिक लक्ष्यों की प्राप्ति में जो सफलता मिली, उस से आप (सल्ल०) ने न केवल अरब देश की, बल्कि सम्पूर्ण

> संसार की अमूल्य सेवा की है।"

आपने अपने तत्कालीन समाज को जिस रूप में परिवर्तित किया, लोगों को प्रशिक्षित किया, जीवन का नया आयाम और नया आदर्श पेश किया, उनको संगठित और शक्तिशाली बनाया और एक अत्यन्त असभ्य क़ौम को सुसभ्य और शक्तिशाली गिरोह में परिवर्तित कर दिया, यह मानव-इतिहास में अपनी कोई मिसाल नहीं रखता। टॉमस कारलायल के शब्दों में—

> "इस्लाम ने अन्धकारमय अरब राष्ट्र को रोशनी दिखायी, उसे प्रकाशमान किया। अरब पहली बार इसके द्वारा जागृत हुए। भेड़ों के चरवाहे, दुनिया की सृष्टि के समय से ही बिना किसी पहचान के मरुस्थलों में मारे-मारे फिर रहे थे कि एक दूत उनके बीच आया, जिसकी बातों पर उन्होंने विश्वास किया, तो देखते-देखते वे महत्वहीन लोग महत्वपूर्ण हो गये और एक शताब्दी के अन्दर-अन्दर तुच्छ समझे जाने वाले लोग दुनिया में महान् हो गये। उसके बाद एक ओर ग्रेनेडा और दूसरी ओर दिल्ली तक उनका अधिकार हो गया।"

इन प्रमाणों को देखते हुए इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका की यह बात कितनी सत्य मालूम होती है, जो उसने आपके सफल व्यक्तित्व की चर्चा करते हुए अपने अध्याय 'कुरआन' के अन्तर्गत कही है—

> "आप सभी ईश दूतों (पैग़म्बरों) और धार्मिक व्यक्तियों में सबसे अधिक सफल व्यक्ति तथा दूत हैं।"

मुहम्मद (सल्ल०) जैसे सफल और बहुआयामी व्यक्तित्व वाले पुरुष के जीवन-चरित्र, उपलब्धियों और घटनाओं का वर्णन करना आसान नहीं है। आपके २३ वर्ष के नबवी जीवनकाल (ईश्वरीय दूत-काल) में इतनी घटनाएं घटित हुई हैं और इतनी तेज़ी से घटित हुई हैं कि उन घटनाओं का केवल उल्लेख ही हज़ारों पृष्ठों पर फैल जायेगा। इस संक्षिप्त लेख में हमने केवल यह बताने की चेष्टा की है कि मुहम्मद (सल्ल०) केवल मुसलमानों के नबी नहीं हैं, बल्कि आप (सल्ल०)

सम्पूर्ण मानव-जाति के लिए ईश्वर के अन्तिम दूत हैं।

अतः मुहम्मद (सल्ल०) को भौगोलिक सीमाओं में रखकर देखने के बजाय सार्वभौम रूप में देखिये; क्योंकि आपका अवतरण किसी जाति विशेष, क्षेत्र-विशेष और समय-विशेष के लिए नहीं हुआ है, बल्कि सम्पूर्ण मानव-जाति के लिए और आने वाले समयों अर्थात् क़ियामत तक के लिये हुआ है। आपके बाद कोई नया पैग़म्बर नहीं आयेगा। आप अन्तिम पैग़म्बर हैं।

भारत में मुहम्मद (सल्ल०) और इस्लाम के प्रति राजनैतिक और कुछ अन्य कारणों से बड़ी ग़लतफ़हमी पाई जाती है, बल्कि कुछ लोगों ने ग़लतफ़हमी फैलाने का ठेका ले रखा है और इस प्रकार के लोग अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए वातावरण को तनावपूर्ण बनाए रखना अपना कर्तव्य समझते हैं। यह दुःखद बात है।

द्वितीय अध्याय

आप (सल्ल०) का पवित्र जीवन

एको धर्म : द्वितीयो नास्ति

मानव-इतिहास के प्रत्येक चरण में बहुत-सी ऐसी पवित्र आत्माओं ने जन्म लिया है, जिन्होंने मानव-जाति को ईश्वरीय सन्देश और ईश्वरीय जीवन-व्यवस्था से अवगत कराया। इन पवित्र आत्माओं को ईश्वरीय दूत, प्रोफेट या पैग़म्बर के नाम से जाना जाता है। क़ुरआन के अनुसार ये पैग़म्बर हर क्षेत्र, हर जाति, हर समाज और हर ज़माने में आये और अपने-अपने समय में अपने समाज को ईश्वरीय मार्ग की ओर बुलाया। कभी तो उनके समाज ने उनकी बात मानी और कभी इंकार कर दिया। जिन्होंने उनकी बात मानी वे लोक और परलोक दोनों में सफल रहे और जिन्होंने उनकी बात न मानी वे दोनों लोकों में असफल हुए।

आज विश्व में हम जिन धर्म-गुरुओं को जानते हैं, वे सब ईश्वर के दूत रहे हैं। जैसे :— हज़रत इब्राहीम (अ०), हज़रत ईसा (अ०), हज़रत मूसा (अ०) आदि। भारत में भी ऐसी पवित्र आत्माओं ने जन्म लिया होगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है, क्योंकि क़ुरआन का कथन है—

"हम (ईश्वर) ने हर क़ौम में मार्ग-दर्शक (दूत) भेजे हैं।"

हो सकता है कि राम, कृष्ण और महात्मा बुद्ध, जिनको लोग ग़लती से भगवान् समझते हैं, ईश्वर के दूत रहे हों और जिस तरह अन्य बहुत-से ईशदूतों (पैग़म्बर) की शिक्षाओं और चरित्र को बाद के लोगों ने बिगाड़ कर पेश किया है, इनकी शिक्षाओं और चरित्र को भी बदल कर रख दिया हो। वेद, उपनिषद् और गीता के श्लोकों में हमें ऐसे बहुत-से श्लोक मिलते हैं, जो क़ुरआन की शिक्षा से मिलते-जुलते हैं। इससे आभास होता है कि हो न हो दोनों का स्रोत एक ही हो। अगर यह बात किसी रूप में सत्य है तो इससे इस तथ्य की पुष्टि होती है कि धर्म एक है, अनेक नहीं। यह बात इस रूप में भी समझ में आती है कि यदि ईश्वर एक है, जैसा कि सभी धर्म के लोग मानते हैं, तो निश्चित रूप से उसकी ओर से

दिया गया मार्ग-दर्शन अर्थात् जीवन-व्यवस्था भी एक ही होनी चाहिए। क़ुरआन का सम्पूर्ण तर्क इसी आधार पर है—ईश्वर एक—मानव एक, तो जीवन-यापन का सिद्धान्त भी एक ही होना चाहिए। यही इस्लाम का आह्वान है। क़ुरआन ईश्वर के द्वारा भेजे गये दूतों में कोई अन्तर नहीं करता। कोई व्यक्ति उस समय तक मुसलमान नहीं हो सकता, जब तक कि वह हज़रत ईसा (अ०) और हज़रत मूसा (अ०) और ईश्वर के अन्य पैग़म्बरों पर उसी तरह विश्वास न करे जिस तरह वह मुहम्मद (सल्ल०) पर विश्वास करता है। स्पष्टतः क़ुरआन की शिक्षा धर्म को एक मानने की है और विभिन्न पैग़म्बर एक ही श्रृंखला की विभिन्न कड़ियाँ हैं, जो एक-दूसरे से पूर्णतः मिली हैं। इसका विखंडन धर्म नहीं अधर्म है।

मानवता का स्रोत एक है

भारतीय धर्मशास्त्रों के अनुसार 'मनु' इस धरती पर पहले मानव थे, जिनसे यह संसार फैला। ये वही व्यक्ति हैं, जिनको क़ुरआन में 'आदम' और बाइबिल तथा तौरात में 'एडम' के नाम से पुकारा जाता है और यदि मनु को प्रथम मनुष्य माना जाता है तो यह दूसरे चरण की बात है, जबकि प्रलय के बाद मानव-जाति की नस्ल उन्हीं से चली है। क़ुरआन में उनको 'नूह' और बाइबिल तथा तौरात में उन्हें 'नोह' (Noah) के नाम से पुकारा जाता है। भाषाई दृष्टिकोण से आदि, आदिम तथा आदमी इसी आदम शब्द से बने हैं, जो सम्पूर्ण मानव-जाति के प्रथम पिता हैं। क़ुरआन, बाइबिल तथा तौरात आदम को केवल प्रथम मनुष्य ही नहीं मानते, बल्कि उनको इस धरती पर ईश्वर का पहला पैग़म्बर भी मानते हैं। उनसे जो नस्ल चली, उनमें ईश्वरीय मार्ग पर दुष्ट आत्माओं के प्रभाव के कारण विचलन आया, जिसको पुनः ईश्वरीय मार्ग पर लाने के लिए ईश्वर मानव-जाति में से ऐसे लोगों को भेजता रहा, जो लोगों को ईश्वरीय मार्ग पर चलाने का प्रयास और वास्तविक धर्म की पुनः स्थापना करते रहे।

गीता के अनुसार जब-जब धर्म की ग्लानि होती है, तो श्री कृष्ण कहते हैं कि मैं अवतरित होता हूँ, ताकि अधर्म का विनाश और धर्म की स्थापना करूँ। (४ : ७-८) इसका अर्थ यह भी हो सकता है कि जब-जब धर्म की ग्लानि होती है तो ईश्वर धर्म की पुनर्स्थापना के लिए अपना दूत भेजता है। इस्लामी विचारधारा के

अनुसार इस संसार में हजारों पैग़म्बर आये, जिन्होंने अपने-अपने समय में ईश्वरीय जीवन-व्यवस्था की ओर लोगों को बुलाया। इस श्रृंखला की अन्तिम कड़ी हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) हैं। आपका जीवन तथा शिक्षा संपूर्ण धर्मों और धर्मगुरुओं की शिक्षाओं का सार है।

ईश्वर एक है और वह माँ के पेट से जन्म नहीं लेता

ईसाइयों तथा यहूदियों की तरह भारतवासियों में भी एक ग़लतफ़हमी पाई जाती है। जिस तरह ईसाइयों ने हज़रत ईसा (अ०) को ख़ुदा का बेटा बना लिया और यहूदियों ने हज़रत उज़ैर को ख़ुदा का बेटा कहा। भारतवासी भी अपने बहुत-से धर्मगुरुओं को भगवान या ईश्वर कहते हैं, हालांकि एक व्यक्ति चाहे कितना ही महान क्यों न हो वह ईश्वर की सन्तान या भगवान नहीं हो सकता। ईश्वर इस तरह के संबंधों से परे है। गुरु नानक ने कहा है—

> **"उस व्यक्ति की जीभ सड़ जाये जो कहता है कि ईश्वर माँ के पेट से जन्म लेता है। ईश्वर 'जो सारे संसार का जन्मदाता है' किसी माँ के पेट से कैसे जन्म ले सकता है।"**

अतः क़ुरआन ने ईश्वर का परिचय कराते हुए स्पष्टतः कहा—

> **"कह दो कि ईश्वर एक है; ईश्वर निस्स्पृह (बेनियाज़) है; उसका न कोई माता-पिता है, न उसकी कोई सन्तान; वह अकेला है, उस जैसा कोई नहीं।"**

यह मानव-जाति की विडम्बना रही है कि जिन महान् व्यक्तियों ने जीवन भर एक ईश्वर की भक्ति की और मात्र उसी की भक्ति, उपासना और आज्ञा-पालन की शिक्षा दी, लोगों ने चाहे उनके जीवन में उनकी बात मानी हो या न मानी हो, किन्तु उनके मरने के बाद उन्हीं की मूर्ति बनाकर और उन्हीं को भगवान् घोषित करके पूजना शुरू कर दिया। यही हर धर्म-गुरु के साथ हुआ और हो रहा है। यहीं ईसा (अ०) और मूसा (अ०) के साथ हुआ और यही राम और कृष्ण के साथ देखने को मिलता है। इसी आधार पर धर्म बँट गया, जाति बँट गई और मानवता खण्डित होकर रह गई। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) का मानवता पर सबसे बड़ा एहसान यह है कि आपने इस विखंडन की प्रक्रिया को बिल्कुल रोक दिया।

इस्लाम का अर्थ

'इस्लाम' अरबी भाषा का एक शब्द है, जिसका अर्थ है आज्ञापालन, शांति और सुव्यवस्था। पारिभाषिक रूप में इस्लाम एक ईश्वर के आज्ञापालन को कहते हैं, जिससे शांति और सुव्यवस्था उत्पन्न होती है और लोक-परलोक सफल होता है। दुनिया के चाहे जिस हिस्से में जो भी धर्मगुरु और पैग़म्बर आये हों उन सभी ने एक ईश्वर के आज्ञापालन की शिक्षा दी, क्योंकि इसी के द्वारा परम शांति मिलती है। इस दृष्टि से सभी धर्मगुरुओं ने इस्लाम ही की शिक्षा दी। अतः उनको इस्लाम धर्म का सन्देशदाता कहना अनुचित नहीं होगा। यही कारण है कि क़ुरआन सभी धर्मगुरुओं का समान रूप से आदर करने की शिक्षा देता है और अगर उनकी शिक्षा और चरित्र में कुछ त्रुटि और अनैतिक तत्व मिलते हैं तो उन्हें उनके बाद के लोगों की उपज कहता है। अतः प्रत्येक धर्मगुरु एक ही धर्म (इस्लाम) के अनुयायी और अच्छे चरित्र के लोग थे, चाहे वे हज़रत इब्राहीम (अ०) हों, हज़रत नूह (अ०) हों, हज़रत ईसा (अ०) या हज़रत मूसा (अ०) हों या हमारे देश भारत में आने वाले पैग़म्बर।

क़ुरआन ईश्वर की वाणी है और हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ईश्वर के अन्तिम दूत

इस्लाम, क़ुरआन और हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के बारे में हमारे समाज में तरह-तरह की ग़लतफ़हमियाँ पाई जाती हैं। कहा जाता कि इस्लाम धर्म की शुरुआत मुहम्मद (सल्ल०) से हुई और क़ुरआन आपकी वाणी है। जैसा कि उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है इस्लाम ईश्वरीय धर्म है, जो आदम से प्रारम्भ हुआ। यह सभी धर्मगुरुओं का धर्म रहा है। मुहम्मद (सल्ल०) पर तो आकर यह धर्म पूर्ण हुआ और हर देश, हर जाति, हर वर्ग और हर समय और हर समाज के लिए यही अन्तिम और सम्पूर्ण विधि-व्यवस्था और जीवन-व्यवस्था है, जो समस्त मानव-जाति के लिए अनुसरणीय है। क़ुरआन किसी मनुष्य की रचना नहीं, ईश्वर की वाणी है, जैसे कि तौरात, बाइबिल और कुछ लोगों के अनुसार वेद इत्यादि हैं। इन पुरानी किताबों और क़ुरआन में केवल इतना अन्तर है कि उन किताबों की ऐतिहासिकता संदिग्ध है और उनमें बाद के लोगों ने बहुत कुछ उलटफेर कर दी

है, जबकि क़ुरआन अपने अवतरण के दिन से लेकर आज तक बिल्कुल सुरक्षित है। अतः यह पूर्ण रूप से विश्वसनीय है। इसलिए यह ईश्वरीय धर्म पर चलने का एकमात्र साधन है। अतः इस्लाम से घृणा करने, चौंकने और घबराने की जरूरत नहीं है, बल्कि इसको जानने और समझने की जरूरत है, क्योंकि क़ियामत (परलोक) में इसी के आधार पर आपसे पूछताछ होनी है।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की विशेषता

आइए, इस पृष्ठभूमि में हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के पवित्र जीवन से परिचय प्राप्त करें। उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि धर्म हमेशा से एक ही रहा है और ईश्वर की ओर से आए सभी पैग़म्बरों ने इसी की ओर लोगों को बुलाया है। अतः वे सब उसी धर्म के आमंत्रणदाता थे, जिसे छठी शताब्दी के अन्त में हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) नये, सम्पूर्ण और अंतिम संस्करण के रूप में लेकर आए। आप उस समय दुनिया में पधारे, जब मानवता अपनी दयनीय अवस्था में पहुंच चुकी थी और ज्ञान-विज्ञान का युग आप (सल्ल०) ही के कर-कमलों द्वारा प्रारम्भ होने वाला था। अतः इसी अवस्था में मनुष्य को ज्ञान की वह ज्योति अर्पित की गई, जो हर अंधकार में प्रकाश का और हर कठिनाई में सरलता और सुगमता का परिचायक थी। एक बार फिर मानवता की भूली-बिसरी शिक्षाओं को याद कराया गया और नए युग की शुरुआत पर अब जिन चीज़ों की आवश्यकता थी, वे प्रदान की गयीं। अतः इस दृष्टिकोण से हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) केवल एक रसूल ही नहीं, बल्कि आधुनिक युग के आरंभ करने वाले भी हैं। इस लिहाज़ से छठी शताब्दी के अन्तिम चरण से प्रलय तक का जो युग है, वह 'मुहम्मद-युग' है। आप (सल्ल०) में और ईश्वर के अन्य पैग़म्बरों में निम्नांकित अन्तर है—

१. आप ईश्वर के अन्तिम दूत हैं। आप के बाद कोई नबी (दूत) नहीं आएगा।

२. आपसे पहले जो पैग़म्बर आए वे केवल अपनी जाति, अपने वर्ग, अपने देश या अपने समय के लिए थे; आप सम्पूर्ण मानव-जाति के लिए भेजे गये। आपकी शिक्षाएं क़ियामत तक के लिए हैं।

३. पिछले पैग़म्बरों का जीवन, उनका चरित्र, उनके कार्य और उनकी शिक्षाएं

समय के साथ धूमिल हो गईं और उनमें लोगों ने बहुत उलट-फेर कर दिया है। स्थिति यहां तक बिगड़ चुकी है कि एक निष्पक्ष शोधकर्त्ता के लिए यह निश्चित करना कठिन हो गया है कि क्या वे ईश्वर के पैग़म्बर थे भी और अगर थे तो क्या वे एक-सा आचरण कर सकते थे या ऐसी शिक्षा दे सकते थे। अत: अब हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की शिक्षाएं ही पालन करने योग्य हैं और आपका चरित्र ही अनुकरणीय है, क्योंकि आपका जीवन, आपका चरित्र, आपकी शिक्षाएं अपनी तमाम विशेषताओं के साथ इतिहास के पूर्ण प्रकाश में हैं, जिन पर कोई संदेह नहीं किया जा सकता।

हज़रत मुहम्मद का जीवन-परिचय

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) का जन्म २० अप्रैल, ५७० ई० में मक्का में क़ुरैश क़बीले के एक बहुत ही प्रतिष्ठित परिवार बनू हाशिम में हुआ था। आप के पिता का नाम अब्दुल्लाह और आपकी माता का नाम बीबी आमिना था। आपके जन्म से पहले ही आपके पिता चल बसे थे। जब आप छ: वर्ष के हुए तो आपकी माता भी चल बसीं। उनके देहान्त के बाद आपके दादा अब्दुल मुत्तलिब ने आपका पालन-पोषण किया, परन्तु वे भी बहुत दिन जीवित नहीं रहे। जब आप की आयु १२ वर्ष की हुई, तो उनका भी देहान्त हो गया। अब्दुल मुत्तलिब की मृत्यु के बाद आपके बड़े चाचा अबू तालिब ने आपको अपने साथ रखा और आपको माता-पिता तथा दादा का प्यार दिया, परन्तु अबू तालिब की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी और उनका परिवार भी बहुत बड़ा था, इसलिए आपको वे पढ़ा-लिखा नहीं सके। आपने उनकी दयनीय अवस्था को देखते हुए मज़दूरी पर लोगों की बकरियाँ चरानी शुरू कर दीं। अबू तालिब छोटे-मोटे व्यापारी थे। जब आप थोड़े और बड़े हुए तो उनके व्यापारिक कार्यों में हाथ बंटाने लगे। थोड़े ही दिनों में आपने अपनी सूझ-बूझ, मेहनत और ईमानदारी से व्यापारिक कार्यों में दक्षता प्राप्त कर ली और अबू तालिब की आर्थिक स्थिति और कारोबार की हालत सुधरने लगी। आप बचपन से ही बहुत सुशील, सभ्य, सत्यवान और ईमानदार थे। समाज की कुरीतियों से कभी आप को कोई मतलब नहीं रहा। कभी आपने शराब और जुआ इत्यादि को हाथ नहीं लगाया और न कभी आपने किसी भी

प्रतिमा के आगे सिर झुकाया। कहावत है कि होनहार बिरवान के होत चिकने पात, यह बात आप पर पूरी तरह सत्य उतरती है। जब आपने व्यापार जगत् में क़दम रखा, तो आपकी सूझ-बूझ, कार्य-कुशलता, ईमानदारी और अमानतदारी से सभी प्रभावित हुए और लोग आप पर विश्वास करके अपनी पूंजी, अपना व्यापारिक धन और मूल्यवान वस्तुएं आपके पास अमानत के रूप में जमा रखते। थोड़े दिनों में आपकी काफ़ी ख्याति हुई और आपका व्यापार मक्का के स्थानीय बाज़ार से निकलकर सीरिया और दूसरे देशों से होने लगा। आपने एक बार सीरिया (शाम) का सफ़र भी किया था। थोड़े ही दिनों में आप मक्का के एक कामयाब और दौलतमन्द ताजिर (व्यापारी) हो गए। आपकी शोहरत और प्रशंसा मक्का के चारों ओर फैल गई। इसी ख्याति और प्रशंसा से प्रभावित होकर मक्का की एक धनवान बेवा और अत्यन्त प्रतिष्ठित स्त्री हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) ने आपको अपने व्यापार में [illegible] लिया और जब उन्हें व्यक्तिगत रूप से आपके गुणों का अनुभव हुआ, तो उन्होंने आपसे शादी करने का संदेश भिजवाया।

पैग़म्बरी से पूर्व आपका जीवन और मक्का की स्थिति

आर्थिक सम्पन्नता आदमी को विचलित कर देती है, विशेष कर ऐसे वातावरण में जहाँ क़दम-क़दम पर बिगड़ने के अवसर उपलब्ध हों। परन्तु इसने आपको एक दूसरा ही अवसर प्रदान किया। भूखों को खाना खिलाना, प्यासों को पानी पिलाना, बीमारों की देख-रेख करना, अनाथ और बेवाओं की सहायता करना, मुसाफ़िरों की मदद करना और समाज के शोषित-पीड़ित वर्गों की सेवा करना आदि आपका प्रिय कार्य हो गया। आप समाज में पाई जाने वाली कुरीतियों से घृणा करते थे, लेकिन इनसे उबरने का कोई व्यापक साधन आपके पास नहीं था। एक बार समाज में फैली अशांति को दूर करने के लिए कुछ नौजवानों ने "हिलफ़ुल फ़ुज़ूल" नामक संस्था बनाई, तो आपने उसमें बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। आपने जिस समाज में जन्म लिया वह तरह-तरह की कुरीतियों और भ्रष्टाचारों से भरा हुआ था। लोग एक ईश्वर की जगह सैकड़ों देवी-देवताओं की पूजा करते थे। लोग उनकी मूर्ति बनाकर पूजा करते थे। यहां तक कि 'ख़ाना-ए-काबा' में भी, जिसका हज़रत इब्राहीम (अ०) ने एकेश्वरवाद (तौहीद) के

प्रतीक के रूप में निर्माण किया था, लोगों ने ३६० मूर्तियां बनाकर रख दी थीं और प्रत्येक दिन एक नयी मूर्ति की पूजा होती थी। स्वयं इब्राहीम (अ०) और उनके पुत्र इस्माईल (अ०) की प्रतिमाएं भी रखी हुई थीं। हालांकि इन्होंने जीवन भर अनेकेश्वरवाद और मूर्तिपूजा के ख़िलाफ़ संघर्ष किया था। शराब, जुआ, जादू-टोना का आम रिवाज था, औरतों की कोई इज़्ज़त नहीं थी। बेटी के जन्म लेने पर उसे ज़िन्दा गाड़ दिया जाता था। बाप के मरने के बाद लोग बड़ी आसानी से अपनी सौतेली माँ से शादी कर लेते थे। हर तरफ़ अशांति और अव्यवस्था थी। लूटमार जीवकोपार्जन का मुख्य साधन था। सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था ब्याज और शोषण की नींव पर खड़ी थी। ग़ुलामी-प्रथा अपनी चरम सीमा पर थी। ग़रीब स्त्री-पुरुष का खुलेआम व्यापार होता था। मानवता त्राहि-त्राहि पुकार रही थी, दानवता ताण्डव नृत्य कर रही थी। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) अत्यन्त भावुक थे। आप सब कुछ देखते, लेकिन कुछ कर नहीं पाते थे। धीरे-धीरे आपके अन्दर दुनिया के प्रति उदासीनता पैदा होने लगी और आप दो-दो दिन, चार-चार दिन, एक-एक सप्ताह के लिये कार्य और व्यापार छोड़ कर मक्का से कुछ मील की दूरी पर एक पहाड़ी के हिरा नामक गुफा में जा कर रहते। वहां उपवास करते, मनन और चिन्तन करते और अपने तौर पर ईश्वर की प्रार्थना करते। यह क्रम कुछ दिनों तक चलता रहा। एक दिन जब आप चिन्तन में लीन थे कि सहसा एक दिव्य ज्योति प्रकट हुई और एक व्यक्ति आपके सामने खड़ा हो गया। उसने आपसे कहा, "पढ़ो !" परन्तु आपने कहा, "मैं पढ़ा हुआ नहीं हूँ।" उसने पुनः अपनी बात दोहराई और आपसे फिर वही बात कही। तीसरी बार उसने ज़ोर से आपको भींच लिया और कहा, "पढ़ो !" और आपने उनके सिखाये निम्नांकित वाक्यों (आयतों) को दोहराया—

"पढ़ो ! अपने प्रभु के नाम से, जिसने पैदा किया; जमे हुए ख़ून के एक लोथड़े से मनुष्य की रचना की। पढ़ो, और तुम्हारा पालनहार (रब) बड़ा ही उदार है, जिसने क़लम के द्वारा ज्ञान की शिक्षा दी, मनुष्य को वह ज्ञान दिया, जिसे वह न जानता था।"

—क़ुरआन ९६ : १-५

यह क़ुरआन की प्रथम आयत है, जो आप पर अवतरित हुई। उस समय आपकी आयु ४० वर्ष की थी। जो कुछ हुआ बिल्कुल अचानक हुआ। इसलिए आप इस घटना से बहुत भयभीत हुए और घबराकर तुरन्त घर लौट आए। भय के मारे आपको कंपकपी लगी हुई थी और आपने अपनी पत्नी ख़दीजा (रज़ि) से कम्बल ओढ़ाने को कहा। जब थोड़ी शांति मिली, तो आपने उन्हें पूरी घटना सुनाई और कहा मुझे अपनी जान का डर है। हज़रत ख़दीजा (रज़ि) ने आपको सांत्वना दी और कहा—

"आप तो भूखों को खाना खिलाते हैं; बीमारों और मुसाफ़िरों की देख-रेख करते हैं; अनाथों और बेवाओं के काम आते हैं, इसलिए ईश्वर आपको कदापि विनष्ट नहीं करेगा।"

दूसरे दिन हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) आपको लेकर अपने वृद्ध भाई वरक़ा बिन नौफ़िल के पास गईं, जो एक पढे-लिखे व्यक्ति थे। उन्होंने ईसाई धर्म क़ुबूल कर लिया था। जब उनको पूरी घटना सुनाई गई, तो उन्होंने कहा कि वह तो वही दिव्य ज्योति है, जो आपसे पहले हज़रत ईसा (अ०) और अन्य नबियों की ओर आयी थी। फिर उन्होंने कहा कि काश मैं उस दिन तक जीवित रहता, जबकि आपकी क़ौम आपको यहां से निकाल देगी तो मैं अवश्य उस समय आपकी मदद करता। आपने घबरा कर पूछा कि क्या मुझे निकाल देंगे ? उन्होंने कहा कि हाँ, क्योंकि ऐसा ही हर नबी के साथ होता आया है। इसके बाद हज़रत जिबरील (अ०) आवश्यकतानुसार प्रकट होते रहे और आपको समय-समय पर अल्लाह के आदेश से अवगत कराते रहे।

सर्वप्रथम आपको अपने परिवार के सम्मुख ईश्वरीय शिक्षाओं के प्रचार का आदेश दिया गया। इसके लिए आपने एक दिन अपने परिवार के सभी सदस्यों को एक भोज पर आमंत्रित किया और उन्हें ईश्वर के आदेश का पालन करने और अपने पर विश्वास करने को कहा। इस सभा में मौजूद केवल एक बालक—हज़रत अली ने आप पर ईमान लाया। बाक़ी सभी लोग उठकर चले गए। इस तरह तीन वर्षों तक गुप्त रूप से लोगों को ईश्वरीय आदेश सुनाया जाता रहा। इस बीच सर्वप्रथम औरतों में आपकी पत्नी हज़रत ख़दीजा (रज़ि०), मर्दों में

आपके मित्र हज़रत अबू बक्र (रज़ि०), आपके गुलाम हज़रत ज़ैद (रज़ि०) और बच्चों में हज़रत अली (रज़ि०) ईमान ला चुके थे ।

तीन वर्षों के गुप्त धर्म-प्रचार के बाद आपको सार्वजनिक रूप से धर्म प्रचार करने का आदेश दिया गया । अतः आप (सल्ल०) ने अरब की उस समय की रीति के अनुसार मक्का के निकट एक पहाड़ी की चोटी पर खड़े होकर तमाम लोगों को पुकारा । जब सब लोग जमा हो गए तो आपने पूछा—

"अगर मैं तुमसे यह कहूँ कि इस पहाड़ी के पीछे दुश्मनों की एक फ़ौज है, जो तुम पर हमला करने वाली है, तो क्या तुम विश्वास करोगे ?" लोगों ने कहा, "अवश्य, क्योंकि आप हमारे बीच अत्यन्त सत्यवान और अमानतदार व्यक्ति हैं और हमने कभी आपको कोई झूठ बोलते नहीं सुना ।" आपने कहा— "तो सुनो, मैं तुम्हारी तरफ़ ईश्वर का दूत हूँ और ईश्वर ने मुझे तुम्हारे मार्ग-दर्शन के लिए भेजा है । मेरा कहा मानो और एक ईश्वर की उपासना करो अन्यथा क़ियामत के दिन तुम्हें भीषण यातनाएं भोगनी होंगी ।"

विरोध, यातनाएं और सामाजिक बहिष्कार

यह कहकर आप पहाड़ी पर से उतर आए । बहुत कम लोगों ने आपकी इस पुकार पर ध्यान दिया, लेकिन मक्का के वातावरण में इस पुकार ने एक हलचल मचा दी । समाज के युवा वर्ग, दलित-पीड़ित लोगों, औरतों और बच्चों में इस पुकार के प्रति जिज्ञासा बढ़ी । शुरू-शुरू में लोगों ने इस पुकार पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया और इन बातों को हँसी-मज़ाक़ में उड़ा दिया । लेकिन जब धीरे-धीरे कुछ लोग मुसलमान होने लगे, तो समाज के ठेकेदारों की आँख खुली और उन्होंने इस लहर को रोकने का प्रयत्न शुरू कर दिया । हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की शिक्षाओं का उपहास करने के साथ-साथ उन्होंने कुछ कमज़ोर वर्ग के लोगों को, जो ईमान ले आए थे, यातनाएं देनी शुरू कीं । लेकिन इसने आग में घी का काम किया और ज्वाला और भड़क उठी । रोज़ दो-चार आदमी इस्लामी परिक्षेत्र में दाख़िल होने लगे । अब पानी सिर से बहने लगा था । इसलिए मक्के के सरदारों ने आपस में विचार-विमर्श करके आपके चाचा और संरक्षक अबू तालिब से कहा कि अपने भतीजे को रोकें, अन्यथा गृह-युद्ध छिड़ जाएगा । चाचा

ने भतीजे को समझाया, लेकिन सभी सरदारों के सामने भतीजे ने दो टूक उत्तर दिया—

"मुझे किसी के समर्थन की ज़रूरत नहीं । मेरे समर्थन के लिए मेरा ईश्वर काफ़ी है । अगर ये लोग मेरे एक हाथ पर सूरज और दूसरे पर चाँद भी लाकर रख दें तो भी मैं यह काम नहीं छोड़ूँगा । या तो यह दावत सफल होगी या फिर मैं इस राह में अपनी जान दे दूँगा ।"

आपका दो टूक उत्तर सुनकर मक्का के सारे सरदार क्रोध से पागल हो उठे और आपके पूरे परिवार का सामाजिक बहिष्कार कर उन्हें "शेबे अबी तालिब" नामक घाटी में क़ैद कर दिया और आपका खाना-पीना सब बंद कर दिया । इस बीच ईमान लाने वाले पेड़ों की छाल छील कर और उनकी पत्तियाँ तोड़ कर खाते रहे । कुछ बकरियाँ थीं, जिनका दूध दूह कर पीते और कभी-कभार कोई दयालु व्यक्ति उन लोगों की दयनीय दशा देखकर चोरी-छिपे कुछ खाने का सामान दे जाता । इस प्रकार तीन साल बीत गये । इस अन्यायपूर्ण व्यवहार से स्वयं क़ुरैश के लोगों में फूट पड़ गई और इस प्रकार आप (सल्ल०) और आपके परिवार को इस क़ैद और सामाजिक बहिष्कार से छुटकारा मिला ।

इस घटना के एक साल के बाद अबू तालिब और आपकी पत्नी हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) का देहान्त हो गया । अबू तालिब की मृत्यु के बाद क़ुरैश के लोग भी निर्भीक और निडर हो गए । क़ुरैश का दमन-चक्र जारी रहा ।

हब्शा की हिजरत

स्थिति जब असहनीय हो गई तो आप (सल्ल०) ने अपने साथियों को मक्का छोड़कर यूथोपिया (हब्शा) जाने का आदेश दिया और मक्का से लगभग ५० मील दूर लोगों का समर्थन प्राप्त करने ताइफ़ चले गए, लेकिन ताइफ़ में आपके साथ लोगों ने बड़ा ही दुर्व्यवहार किया और बड़ी यातनाएं दीं । आप ताइफ़ से अत्यन्त हताश होकर लौटे । मक्का में आपके विरुद्ध अब पहले से ज़्यादा ज़ोर के साथ झूठे प्रोपगंडे का बाज़ार गर्म था । कोई कहता यह तो कवि है, जो मनमानी बातें करता है । कोई कहता यह जादूगर है, जो लोगों का मत फेर देता है । कोई

कहता इस पर कोई प्रेत-आत्मा अपना प्रभाव डाले हुए है। कोई और दूर की कौड़ी लाता। कहता कि हे मुहम्मद ! (सल्ल०) तू अमुक व्यक्ति का शिष्य है और वह जो उल्टी-सीधी बातें सिखा देता है, वही लोगों को आकर सुनाता है। तात्पर्य यह कि जितनी मुंह उतनी बातें। लेकिन किसी व्यक्ति में यह कहने की हिम्मत नहीं होती थी कि मुहम्मद (सल्ल०) झूठ बोलते हैं। क़ुरआन ने लोगों को चुनौती देते हुए कहा—

> "मुहम्मद (सल्ल०) तुम्हारे बीच एक आयु बिता चुके हैं। वह कैसे हैं तुम अच्छी तरह जानते हो और क़ुरआन कोई मानवीय रचना है, तो इसके समान एक ही आयत बना कर ले आओ। अगर तुम अपने दावे में सच्चे हो और एक ईश्वर को छोड़कर तुम चाहे जिसकी मदद ले सकते हो ले लो, लेकिन तुम कदापि ऐसा नहीं कर सकते।"

मदीना में इस्लाम की लहर

इस तरह एक ओर यातनाओं का कुचक्र चलता रहा और दूसरी ओर मुसलमानों की संख्या बढ़ती रही। इसी बीच मदीना से कुछ लोगों की टोली आई और उसने आपकी दावत सुनी और मुसलमान हो गयी। दूसरे वर्ष दूसरी टोली आई, जिसमें ७० व्यक्ति शामिल थे। टोली के सभी लोग मुसलमान हो गये और आपको मदीना आने का निमंत्रण दिया। मक्के के सरदारों ने यह प्रस्ताव पारित किया कि आपको क़त्ल कर दिया जाए। अब आप के लिए मक्का में रुकना ठीक नहीं था। अतः ईश्वर की ओर से आदेश हुआ कि आप (सल्ल०) मक्का से मदीना चले जाएं। इसी घटना को इस्लामी इतिहास में 'हिजरत' कहते हैं। इसी दिन से हिजरी कैलेण्डर शुरू हुआ। हिजरत को इस्लामी क्रान्ति का दरवाज़ा माना जाता है।

आपकी नैतिक महानता

क़ुरैश क़बीले के लोग उस समय भी आपकी जान के प्यासे थे और आप (सल्ल०) के प्रति तरह-तरह के षड्यंत्र कर रहे थे, आप पर इतना विश्वास करते थे कि अपनी अमानत आपके पास जमा रखते। आपके सिवा और कोई होता,

जैसा कि झूठी क्रान्ति के अगुआ साम्यवादी लोग रहे हैं, तो इस अवसर से लाभ उठाते हुए लोगों की सारी सम्पत्ति लेकर चम्पत हो जाते और यह बात नैतिकता के बहुत ज़्यादा विरुद्ध भी न होती, क्योंकि जान के दुश्मनों का माल खाना सामान्यतः अपराध नहीं माना जाता। लेकिन इस्लामी क्रान्ति केवल राजनैतिक और सामाजिक क्रान्ति नहीं है, बल्कि नैतिक क्रान्ति भी है। यहां केवल लक्ष्य के पवित्र होने ही पर बल नहीं दिया जाता, बल्कि उसके उपाय और उपक्रम की पवित्रता पर भी ज़ोर दिया जाता है। अगर उपक्रम की पवित्रता संदिग्ध है, तो लक्ष्य कभी पवित्र नहीं रह सकता। वास्तव में नैतिक और मानवीय मूल्यों की पुनर्स्थापना ही इस्लामी क्रान्ति है। यही कारण है कि आपने हज़रत अली (रज़ि०) को सारी अमानतें सौंपी और उन्हें आदेश दिया कि जिन लोगों की अमानतें हैं, उन्हें पाई-पाई चुका कर ही वह मदीना आएं। इसके बाद आप (सल्ल०) हज़रत अबू बक्र (रज़ि०) के साथ मदीना रवाना हो गए। इस प्रकार १३ वर्षों तक मक्का में इस्लाम की दावत देने के बाद आप (सल्ल०) मदीना तशरीफ़ ले गए।

मदीना में आपका प्रवेश : नये युग का शुभारंभ

मदीना में आप (सल्ल०) के अनुयायियों ने आपका भव्य स्वागत किया। जिस समय आप मदीना पहुंचे, उस समय मदीना एक छोटी-सी बस्ती थी, जहां दो क़बीले— औस और ख़ज़रज आबाद थे। इनमें आपस में ख़ूब लड़ाई चलती थी। थोड़ी दूर पर यहूदियों के क़बीले आबाद थे और कहीं-कहीं ईसाई भी पाए जाते थे। आपके साथ चूंकि बहुत-से लोग मक्का छोड़कर आ गए थे, इसलिए आपके सामने सबसे बड़ी समस्या इन नव-आगन्तुकों (मुहाजिरों) को बसाने की थी। आपने इनके बसाने का एक उत्तम उपाय यह किया कि मदीना के प्रत्येक मुसलमान परिवार से मुहाजिरों के एक परिवार के साथ बन्धुत्व करा दिया। इस तरह सारा बोझ थोड़ा-थोड़ा करके सब ने हँसी-ख़ुशी उठा लिया। इसे इस्लामी इतिहास में "मसावात" अर्थात् बन्धुत्व के नाम से पुकारा जाता है। इसके बाद आप (सल्ल०) ने मदीना में शांति और सुव्यवस्था क़ायम करने के लिए औस और ख़ज़रज से संधि करा दी तथा आस-पास के यहूदी क़बीलों से पारस्परिक सहयोग और शांति व्यवस्था बनाए रखने का समझौता कर सभी लोगों को एक

सूत्र में बांध दिया। इस प्रकार प्रथम आधुनिक इस्लामी राज्य की आधारशिला रख दी गई।

क़ुरैश की बौखलाहट

आपका और आपके साथियों का मक्का से मदीना सुरक्षित निकल आने पर मक्का के सरदारों को बहुत ग़ुस्सा आया और उन्होंने सन् दो हिजरी में आप (सल्ल०) पर हमला कर दिया। मदीना से कुछ दूर बद्र के मैदान में आपके अनुयायियों और मक्का के बहुदेववादियों (मुशरिकों) के बीच लड़ाई हुई। आपके सहयोगी बिल्कुल फटेहाल थे, न खाने को था और न लड़ाई का सामान ही। इनकी संख्या भी बहुत कम थी। ये कुल ३१३ थे, जबकि क़ुरैश एक हज़ार से अधिक थे और वे पूरे साज-सज्जा के साथ आए थे। भीषण युद्ध के बाद क़ुरैश हार गए। उनके सभी बड़े सरदार मारे गए। इस तरह इस्लाम को प्रथम विजय प्राप्त हुई।

दूसरे साल क़ुरैश पिछली हार का बदला लेने फिर आए। इस साल और अधिक तैयारी के साथ आए थे। उहद के स्थान पर भीषण युद्ध हुआ। इस बार मुसलमानों को अपनी ग़लती से बहुत क्षति उठानी पड़ी। अन्ततः जंग बिना हार-जीत का फ़ैसला हुए ख़त्म हो गयी।

जब क़ुरैश ने यह देखा कि वे अकेले मुहम्मद (सल्ल०) से नहीं लड़ सकते, तब उन्होंने पूरे अरब में बिखरे सभी क़बीलों से समर्थन प्राप्त करना शुरू कर दिया। संधि के बावजूद मदीना के यहूदियों ने खुल्लम-खुल्ला मक्का के मुशरिकों का साथ दिया और सन् पांच हिजरी में अरब के सभी क़बीलों ने एकजुट होकर मदीना की छोटी-सी इस्लामी बस्ती पर हमला कर दिया। परिस्थिति की गंभीरता को देखते हुए आप (सल्ल०) ने लड़ाई की एक नई तकनीक अपनायी, जिससे अरब वाले बिल्कुल अनभिज्ञ थे। इसको इतिहास में जंगे-ख़ंदक या जंगे अहज़ाब के नाम से जाना जाता है। इस लड़ाई में बिना किसी संघर्ष के क़ुरैश के हौसले पस्त हो गये और उनकी एकता नष्ट हो गई। इस प्रकार वे धराशाई और निराश होकर वापस लौटे और आप (सल्ल०) ने घोषणा कर दी कि अब क़ुरैश हम पर हमला नहीं कर सकते, अब हम उन पर हमला करेंगे।

इसके बाद कुछ और छिट-पुट घटनाएं घटित हुई, लेकिन इन सभी में इस्लामी लश्कर विजयी रहा। यहूदियों ने संधि और समझौता के बाद भी मुसलमानों की पीठ पर छुरा घोंपा। वे एक षड्यंत्र की असफलता के बाद नया षड्यंत्र शुरू कर देते। अतः कभी तो पुनः उनसे संधि की गई और कभी काफ़ी सीमित ढंग की फ़ौजी कार्रवाई द्वारा उनकी गति-विधियाँ रोकने की कोशिश की गई। जब वे मुहम्मद (सल्ल०) की हत्या का षड्यंत्र रचते हुए रंगे हाथ पकड़े गए, तो उन्हें मदीना से निकल जाने की नोटिस दे दी गयी। फिर भी उनके साथ यह रियायत की गई कि वे अपना जितना सामान ले जा सकते हैं, ले जाएं। जाते हुए उन्होंने अपने बाग़ों को काट दिया, अपनी खेतियां जला दीं और अपने घरों में आग लगा दी, ताकि मुसलमानों को कुछ हाथ न लगे।

एक अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय का उत्थान

इस तरह इस्लामी आन्दोलन सफलता की सीढ़ी चढ़ता हुआ आगे बढ़ता रहा। अब दूर देश तक आप (सल्ल०) की ख्याति फैल गई और अरब तथा उसके आसपास के सीमावर्ती क्षेत्रों से बहुत-से दल मदीना पहुंचने लगे। कुछ तो जानकारी प्राप्त करने आते और कुछ ईमान लाने। आपके अनुयायियों में रोम, ईरान, यूथोपिया और भारत के लोग शामिल थे और प्रत्येक जाति, वर्ग, धर्म, भाषा तथा रंग के लोग मुसलमान होते गये।

अरब में एक नई शक्ति के उदय की चर्चा सुनकर उस समय की दोनों महाशक्तियों— रोम और ईरान के कान खड़े हो गए। ईरानी शासक ने अपने कुछ सिपाही आप (सल्ल०) को गिरफ़्तार करने के लिए भेजे और रोमन सेना अरब की सीमाओं पर जमा होने लगी। लेकिन रोमन शासकों की आपसे लड़ने की हिम्मत नहीं हुई। इस तरह इस्लाम मन और धरती दोनों पर विजय का पताका फहराता हुआ आगे बढ़ता रहा। अन्ततः मक्का पर आपको बिना लड़े विजय प्राप्त हुई। इस विजय के बाद आप (सल्ल०) ने मक्कावासियों से पूछा—"बताओ तुम्हारे साथ कैसा बर्ताव किया जाए?" स्थिति पूर्णतः बदल चुकी थी। सभी ने कहा—"आप एक शरीफ़ बाप के बेटे और शरीफ़ भाई हैं।" आप (सल्ल०) ने सब को क्षमा कर दिया, उनको भी जिन्होंने आपके सिर पर लीद डाली थी; उनको

भी जिन्होंने आपके गले में रस्सी डालकर फाँसी देनी चाही थी; उनको भी जिन्होंने आप पर पत्थर बरसाए थे; उनको भी जिन्होंने आपकी बेटियों को तलाक़ दे दिया; उनको भी, जिन्होंने आपको क़त्ल करने की साज़िश की थी; उसे भी जिसने आपके चाचा का कलेजा काट कर कच्चा चबाया था और उनको भी जिन्होंने मक्का से निकल जाने के बावजूद आप पर ताबड़-तोड़ हमले करके आप (सल्ल०) को और आपके अनुयायियों को विनष्ट कर देने की सिरतोड़ कोशिश की थी। केवल कुछ व्यक्तियों को छोड़ कर , जिन पर आतंक फैलाने का आरोप था, आपने सभी को माफ़ कर दिया। क्या दुनिया में ऐसी कोई मिसाल मिलती है कि विजय प्राप्त करने के बाद किसी व्यक्ति ने इतनी दयालुता से काम लिया हो? वास्तव में यह किसी साधारण मनुष्य का कार्य नहीं हो सकता। यह तो अत्यन्त कृपाशील ईश्वर का प्रतिनिधित्व करने वाले व्यक्ति मुहम्मद (सल्ल०) से ही संभव था। आप (सल्ल०) सारे संसार के लिए रहमत हैं। कुरआन में है—

"हमने आपको सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के लिए केवल दया बना कर भेजा है।"

वास्तव में, आपके द्वारा लाई गई इस्लामी क्रान्ति बिल्कुल रक्तहीन क्रान्ति थी। १३ वर्ष की संघर्षपूर्ण अवधि में दोनों पक्षों को मिला कर उतने लोग भी नहीं मारे गए , जितना आज भारत में एक बड़े साम्प्रदायिक दंगे में मारे जाते हैं। विश्व-इतिहास में दूसरी कोई क्रान्ति इतनी रक्तहीन नहीं है। स्वयं भारत में गाँधी जी के नेतृत्व में चलाया गया अहिंसावादी राष्ट्रीय स्वतंत्रता-आन्दोलन भी इस रक्तहीन क्रान्ति का मुक़ाबला नहीं कर सकता। दरअसल इस्लामी राजनीति लोगों को मारने और विजय प्राप्त करने की नहीं है, बल्कि बिना ख़ून-ख़राबे या परिस्थितिवश कम-से-कम रक्तपात के द्वारा नैतिक मूल्यों के आधार पर लोगों का दिल जीतना है। इस संबंध में इस्लाम का निर्देशक सिद्धान्त (Directive Principles) कुरआन के शब्दों में यह है —

"जिसने किसी व्यक्ति को ख़ून के बदले या ज़मीन में बिगाड़ (फ़साद) फैलाने के सिवा किसी और कारण से क़त्ल किया, उसने मानो सम्पूर्ण मानवता को क़त्ल कर दिया और जिसने किसी को

जीवन प्रदान किया उसने मानो सम्पूर्ण मानवता को जीवन प्रदान किया।" —५ : ३२

अहिंसा यह नहीं है कि क़ातिलों को छोड़ दिया जाए , बल्कि अहिंसा यह है कि किसी निर्दोष पर हाथ न उठाया जाए। यह क़ानून है, यदि कोई किसी को क्षमा करना चाहे, तो इस्लाम इससे भी रोकता नहीं, बल्कि इसके लिए प्रेरित करता है।

मुहम्मद (सल्ल०) ने जो ऐतिहासिक इस्लामी क्रान्ति लाई, उसमें २३ वर्षों में दोनों पक्षों (मुस्लिम-ग़ैर मुस्लिम) के कुल १०१८ व्यक्ति मारे गए , जिनमें मुसलमानों की संख्या २५९ और ग़ैर मुस्लिमों की संख्या ७५९ थी। इन २३ वर्षों में कुल ८१ मुठभेड़ हुईं। २७ मुठभेड़ों में आप (सल्ल०) सम्मिलित रहे, परन्तु वास्तविक लड़ाइयों की संख्या बहुत कम है। जबकि फ्रांस, रूस और अन्य देशों में आई क्रान्तियों में लाखों लोगों की बलि दे दी गई। भारत में जो सांप्रदायिक दंगे होते हैं, उनमें सरकारी आंकड़ों के अनुसार प्रतिवर्ष औसतन एक हज़ार से अधिक लोग मारे जाते हैं।

तृतीय अध्याय

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की शिक्षाएं

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की शिक्षाओं पर प्रकाश डालने के लिए तो एक पूरी किताब चाहिए। इसलिए यहाँ हम केवल उनका सारांश ही प्रस्तुत करेंगे। आगे बढ़ने से पूर्व एक बात अच्छी तरह समझ लीजिए कि आपके द्वारा दी गई शिक्षाएं वे जानी-मानी सच्चाइयाँ हैं, जिन पर दुनिया आदिकाल से एकमत है। न तो आप कोई निराले रसूल हैं और न आपकी शिक्षाएं निराली हैं। आपने केवल उन शिक्षाओं को ज़िन्दा किया। आपने उन्हें अपने जीवन में बरत कर दिखाया। आपने ईश्वरीय शिक्षाओं को पूर्ण किया। यदि कोई आप (सल्ल०) और उन जानी-मानी सच्चाइयों और आदर्शों को झुठलाता है, जो सर्वमान्य हैं, क्योंकि आप (सल्ल०) की शिक्षाएँ सभी पैग़म्बरों की शिक्षाओं का सार हैं, तो वह शाश्वत सत्य को ही झुठलाता है। अब आइये बिना किसी भेदभाव के आप (सल्ल०) की मौलिक शिक्षाओं का अध्ययन करें।

आपकी शिक्षाओं के तीन मौलिक आधार हैं :—

१. एकेश्वरवाद (तौहीद)

२. परलोकवाद (आख़िरत)

३. ईशदूतत्व (रिसालत)

एकेश्वरवाद अर्थात् तौहीद

एकेश्वरवाद अर्थात् तौहीद यह है कि ईश्वर अपने अस्तित्व, शक्ति और गुण में एक है, अनेक नहीं। संसार में पाई जाने वाली सारी वस्तुएँ उसकी रचना हैं, उसका अंग और अंश नहीं। अतः ईश्वर के अस्तित्व, गुणों तथा शक्तियों का विभाजन नहीं किया जा सकता। अगर कोई ऐसा करता है तो यह मनगढ़न्त, अन्यायपूर्ण और असत्य है। ईश्वर के अतिरिक्त किसी अन्य को ईश्वरीय शक्ति प्रदान करने का अर्थ यह है कि अनधिकार एक व्यक्ति को वह शक्ति प्रदान कर दी जाए, जिसके वह योग्य नहीं। इस अनधिकार शक्ति के प्रयोग से ही समाज में अशान्ति उत्पन्न होती है। तौहीद इस्लाम की प्रमुख और पहली शिक्षा है। यह

इस्लाम की शिक्षाओं का पहला स्तम्भ है। आल्डस हक्सले ने ईश्वर के अस्तित्व पर अयथार्थवादी टिप्पणी करते हुए कहा– "ईश्वर मानव-मस्तिष्क की अनुपम कृति है।" हाँ, आल्डस का यह विचार बहुदेववाद की परम्परा को देखकर सत्य प्रतीत होता है। लोग बड़ी आसानी से किसी महान् पुरुष को ईश्वर या भगवान् की संज्ञा दे देते हैं और मनुष्य को ही नहीं वे तो पहाड़, नदी, समुद्र, वृक्ष, अग्नि, साँप, बिच्छू सभी चीज़ों को पूजते हैं। अपनी कल्पना के आधार पर देवी-देवताओं की प्रतिमा बनाते हैं और चूंकि उन्हें ईश्वरीय शक्ति से युक्त समझते हैं, इसलिए उनके कभी आठ हाथ, पाँच मुंह, तीन नेत्र आदि बना देते। क्या मानव-समाज में ऐसे किसी व्यक्ति के पैदा होने का कोई ठोस ऐतिहासिक प्रमाण है। कदापि नहीं, तो फिर हक्सले की बात सही है कि ईश्वर को मानव-मस्तिष्क ने जन्म दिया है। नहीं, ईश्वर तो परम शक्ति है, जिसने सम्पूर्ण संसार को पैदा किया और मनुष्य उसकी अनुपम रचना है। अगर एक ईश्वर के सिद्धान्त को इंकार कर दिया जाए तो संसार का वह मूल कारक तत्व समाप्त हो जाता है, जिसके बिना इस संसार की कोई व्याख्या नहीं की जा सकती। और यदि कोई व्याख्या की जाएगी तो वह असत्य और त्रुटिपूर्ण होगी। अतः इस्लामी विश्वास यह है कि ईश्वर एक है। इस पर सभी धर्म के लोग एक मत हैं, लेकिन इस एक ईश्वर से हमारा व्यावहारिक संबंध क्या होगा और कैसे होगा, यह बताने में वे असमर्थ हैं। इस्लाम की विशेषता यह है कि उसने ईश्वर और मनुष्य के बीच प्रत्यक्ष व्यावहारिक संबंध स्थापित कर दिया है।

परलोकवाद अर्थात् आख़िरत

इस्लामी धारणा की दूसरी आधारशिला परलोकवाद अर्थात् आख़िरत है, जिसका अभिप्राय यह है कि यह भौतिक संसार भी एक नियत दिन समाप्त हो जाएगा। फिर ईश्वर एक नये लोक को पैदा करेगा और मनुष्य से, जिसे बुद्धि और निर्णय-शक्ति प्रदान की गई है, जिसके कारण उसे सम्पूर्ण संसार में प्राथमिकता प्राप्त है, इस जीवन के बारे में हिसाब-किताब लेगा। जिसने ईश्वरीय आदेशों का पालन किया होगा और न्यायपूर्ण और नैतिक ढंग से जीवन बिताया होगा, वह ईश्वर के अन्तिम फ़ैसले में कामयाब होगा तथा उसे चिरस्थाई परम

सुख का स्थान जन्नत अर्थात् स्वर्ग प्रदान किया जाएगा। और जिसने अनैतिक तथा अन्यायपूर्ण रवैया अपनाया होगा, वह चिरस्थाई दुःख के स्थान जहन्नम अर्थात् नरक में डाल दिया जाएगा। यह इस धारणा का मूल है। ईसाई तथा यहूदी धर्मावलम्बी भी इस धारणा पर विश्वास रखते हैं। भारत में पुनर्जन्म और परलोक की कल्पना पाई जाती है, परन्तु इसमें कुछ संशोधन की आवश्यकता है। पुनर्जीवन तो होगा, परन्तु एक ही बार। अल्लाह अगली पिछली तमाम नस्लों को पुनः जीवित करके इकट्ठा करेगा और उनके कर्मों का पूरा-पूरा बदला देगा। आख़िरत मनुष्य को ज़िम्मेदार और उत्तरदायी बनाता है, अपने जीवन के प्रति भी, अपने समाज के प्रति भी और अपने ईश्वर के प्रति भी। वास्तव में यह दुनिया कोई खेल-तमाशे की जगह नहीं है, यह तो एक परीक्षालय है, यहाँ जैसे कार्य करेंगे आख़िरत में उसी का प्रतिफल मिलेगा। इस प्रकार आख़िरत की धारणा मनुष्य को ईश्वरीय आदेश में बाँधे रखती है और उसे विचलित होने से बचाती है। जिस समाज में यह धारणा नहीं पायी जाएगी या कमज़ोर होगी उस समाज को अन्याय से बचा पाना मुश्किल है।

ईशदूतत्व अर्थात् रिसालत

ईशदूतत्व या रिसालत इस्लामी धारणा का तीसरा मौलिक आधार है, इसकी चर्चा विस्तारपूर्वक ऊपर हो चुकी है, यहाँ बस इतना और जान लीजिए कि ईश्वर ने मनुष्य को परीक्षा के लिए यहाँ पैदा करके और उसके हिसाब-किताब का एक दिन नियत करके उसे यों ही छोड़ नहीं दिया है, बल्कि जीवन-यापन का सही ढंग बताने के लिए उसी दिन से, जिस दिन से मनुष्य को धरती पर पैदा किया, उसने अपने दूतों को भेजना शुरू किया, जो लोगों को ईश्वरीय आदेश बताते रहे और सही ज्ञान द्वारा जीवन में मार्गदर्शन करते रहे। यहां तक कि यह सिलसिला हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) पर समाप्त हो गया। यह धारणा धर्म की एकता का प्रतीक है। इस्लाम ने न किसी नबी या पैग़म्बर को झुठलाया और न किसी ईश्वरीय शिक्षा को, सिवाय उनके जो ग़लत तौर पर उनसे संबंद्ध कर दी गई। भारत में अवतारवाद की एक विशेष कल्पना पाई जाती है, जिसका अर्थ यह बताया जाता है कि स्वयं ईश्वर मनुष्य या किसी अन्य वस्तु का रूप धारण करके

इस धरती पर आता है और अधर्म को समाप्त कर देता है। इस्लाम इसमें केवल इतना संशोधन करता है कि ईश्वर स्वयं नहीं, बल्कि अपनी ओर से महान् पुरुषों को इस कार्य के लिए भेजता है, जो उसके आदेशों के अनुरूप अधर्म को समाप्त करके धर्म की स्थापना करते हैं। भारत में हम जिन लोगों को भगवान् या देवता के नाम से पुकारते हैं, हो सकता है कि वास्तव में वे ईश्वरीय दूत रहे हों, जिनको ग़लती से भगवान् समझ लिया गया है।

इन तीनों मौलिक सिद्धान्तों से पता चलता है कि ये कितने युक्तिसंगत और भारतीय विचारों के निकट हैं।

मनुष्य मन और मस्तिष्क का संगम है। नैतिक आवश्यकताओं के साथ-साथ आध्यात्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी ज़रूरी है। इसी से मन को शांति मिल सकती है। धर्म ही आध्यात्मिकता का स्रोत है। इस्लाम ने मनुष्य के आध्यात्मिक विकास के लिए मूल रूप से निम्नलिखित चार स्रोत बताए हैं--

१. नमाज़

२. रोज़ा

३. ज़कात

४. हज

नमाज़

नमाज़ सर्वशक्तिमान ईश्वर के सामने मनुष्य की दासता और मानव की पारस्परिक समानता का प्रतीक है। नमाज़ में लोग क़ुरआन की आयतें पढ़ते और दुआएँ मांगते हैं। नमाज़ ईश्वर से मनुष्य का प्रत्यक्ष संबंध जोड़ती है और अदृश्य ईश्वर के प्रति उसकी आस्था को दृढ़ बनाती है। उससे डरने और प्रेम करने की भावना जगाती है। उसके आज्ञापालन के लिए तैयार करती है। नमाज़ ईश्वर के सामने अपने सम्पूर्ण इन्द्रियों समेत समर्पण का भाव उत्पन्न करती है, नमाज़ जमाअत के साथ पढ़ना अनिवार्य है। यह समाज में अनुशासन पैदा करने, संगठित रहने और ईश्वर के आदेश का मिल-जुल कर पालन करने की शिक्षा देती है। यह आध्यात्मिक विकास का साधन तो है ही, इसके अतिरिक्त

सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक पहलू भी हैं।

प्रत्येक नमाज़ के पहले लोगों को अज़ान के द्वारा मस्जिद में जमा होने के लिए पुकारा जाता है। इसके संबंध में भारत में एक भ्रांति यह पायी जाती है कि मुल्ला जो बाँग देता है, क्या ख़ुदा बहरा है कि उसको सुनाता है। वास्तव में अज़ान ख़ुदा को सुनाने के लिए नहीं, ख़ुदा के बन्दों को बुलाने के लिए दी जाती है। आपको किसी को बुलाना हो तो आप क्या करेंगे? किसी व्यक्ति का नाम लेकर पुकारेंगे, घंटा बजाएंगे, शंख फूँकेंगे या बिगुल बजाएँगे। अज़ान बुलाने के सभी उपायों में एक अनुपम उपाय है। इसमें व्यक्ति को ईश्वर की महिमा और मानव-कल्याण का हवाला देकर ईश्वर की भक्ति की ओर बुलाया जाता है। अज़ान के बोल इस प्रकार हैं :—

अल्लाह सबसे बड़ा है, अल्लाह सबसे बड़ा है। मैं गवाही देता हूँ कि ईश्वर एक है, मैं गवाही देता हूँ कि मुहम्मद (सल्ल०) ईश्वर के दूत हैं। आओ नमाज़ की ओर, आओ कल्याण की ओर, अल्लाह सबसे बड़ा है, अल्लाह सबसे बड़ा है, अल्लाह के सिवा कोई इलाह (पूज्य प्रभु) नहीं।

यह है अज़ान की पुकार! दुनिया ने इससे सुन्दर और अनुपम बोल आज तक आविष्कृत नहीं किए जब कोई व्यक्ति नमाज़ के लिए मस्जिद में दाख़िल होता है, तो अपने एकेश्वरवादी होने का एलान करता है, अपने और दुनिया के लिए उससे रहमत की भीख मांगता है और प्रत्येक नमाज़ की समाप्ति अपने दोनों ओर "अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाह" कह कर करता है, जिसका अर्थ है तुम पर ईश्वर की सलामती और रहमत हो। इस प्रकार वह सारी दुनिया के लिए शांति और दयालुता का सन्देश लेकर मस्जिद से बाहर निकलता है। फ़र्ज़ नमाज़ें तो केवल पाँच हैं। सूरज निकलने से पहले सुबह में, दोपहर ढलने के तुरन्त बाद, सूरज डूबने से कुछ पहले, सूरज डूबने के तुरन्त बाद और दो घंटा रात बीतने के बाद। इन नमाज़ों को इस्लामी शब्दावली में क्रमशः फ़ज्र, ज़ुहर, अस्र, मग़रिब और इशा की नमाज़ कहते हैं। पांच वक़्त की नमाज़ें सभी के लिए अनिवार्य हैं। इसके अतिरिक्त भी अगर कोई और पढ़ना चाहे तो जितनी बार चाहे पढ़ सकता है। इस प्रकार की नमाज़ को नफ़्ल नमाज़ कहते हैं।

रोज़ा

नमाज़ के अतिरिक्त रोज़ा आध्यात्मिक विकास का दूसरा मुख्य स्रोत है। व्रत सम्पूर्ण मानव-जाति में आध्यात्म का प्रतीक माना गया है। इस्लाम में तीस दिन का रोज़ा प्रत्येक वयस्क स्त्री-पुरुष के लिए अनिवार्य है। केवल बीमार और मुसाफ़िर को इसमें छूट दी गई है कि वे स्वस्थ होने के बाद या घर लौटने के बाद रोज़ा रखें। रोज़ा मनुष्य के अन्दर दानवत्व की दुष्प्रवृत्ति को रोकने का एक कारगर नुस्ख़ा है। इससे आत्मबल और सहनशीलता पैदा होती है और भूखे-नंगे लोगों की पीड़ा को जानने का अवसर मिलता है। रोज़ा का मूल सार यह है कि जब एक व्यक्ति ईश्वर की आज्ञा से एक विशेष समय में खाना-पीना छोड़ सकता है, तो क्या उसकी आज्ञा से ग़लत काम नहीं छोड़ सकता? अवश्य छोड़ देगा। जो व्यक्ति इस विश्वास से रोज़ा नहीं रखता, उसके लिए रोज़ा रखना निरर्थक है। रोज़े के दिनों में सूरज निकलने से सूरज डूबने तक खाना-पीना और औरत के पास जाना हराम (अवैध) है। रात में भोजन करने और औरत के पास जाने पर कोई प्रतिबंध नहीं। भोर होने से पूर्व सहरी खाना वांछनीय है। रोज़ा आध्यात्मिक और शारीरिक दृष्टिकोण से अत्यन्त लाभकारी है।

ज़कात

इस्लाम का तीसरा आध्यात्मिक आधार ज़कात है। ज़कात कोई भीख या अनुदान नहीं है और न यह कोई कर है, बल्कि यह एक माली इबादत है। ज़कात का शाब्दिक अर्थ स्वच्छता और विकसित होना होता है और प्रयोग में इसका अर्थ धन-प्रेम के स्थान पर ईश्वर की पूजा और मानव-प्रेम है। समाज में कोई धनी है और कोई निर्धन। अतः ज़कात पारस्परिक सामाजिक उत्तरदायित्व का परिचायक है। प्रत्येक उस व्यक्ति को, जिसके पास कम-से-कम ५२ $^{१}/_{२}$ तोला चांदी के मूल्य के बराबर माल संचित हो, उसे प्रति वर्ष अपने धन और सम्पत्ति का ढाई प्रतिशत ज़कात के रूप में चुकाना पड़ता है। इस्लामी राज्य के कार्यों में एक मुख्य कार्य ज़कात का जमा और ख़र्च करना भी है। ज़कात एक प्रकार का इस्लामी सामाजिक सुरक्षा-कोष है। इस कोष से समाज के निर्धन, बीमार, बेकार, अपाहिज, अनाथ, बेवा, कर्ज़दार, ग़ुलाम और मुसाफ़िर की मदद की जाती है। इस्लाम में

निर्धनता और भीख माँगने को नापसन्द किया जाता है । और इस्लामी राज्य नहीं चाहता कि राज्य में कोई असहाय और मुहताज रह जाए । अत: यह आध्यात्मिक, सामाजिक और आर्थिक दृष्टिकोण से एक अनुपम व्यवस्था है, जो ईश्वर-भक्ति और मानव-प्रेम का प्रतिफल है ।

हज

हज आध्यात्म की सबसे ऊँची चोटी है । हज में उपर्युक्त तीनों प्रक्रियाओं का समावेश पाया जाता है । हज में मनुष्य अपने घरबार , कारोबार और सांसारिक कार्यों को कुछ दिनों के लिए छोड़ कर केवल एक ईश्वर की भक्ति और उपासना के लिए घर से निकल जाता है और यह कहता है—

"मैं उपस्थित हूँ ईश्वर ! मैं उपस्थित हूँ मेरे अल्लाह ! तेरे सिवा कोई ईश्वर नहीं, तेरा कोई साझी नहीं । में उपस्थित हूँ ऐ मालिक ! मैं उपस्थित हूँ ।"

इस तरह सम्पूर्ण समर्पण-भाव से लोग एकेश्वरवाद के केन्द्र काबा में जमा होते हैं । वहाँ नमाज़ें पढ़ते हैं, तवाफ़ (परिक्रमा) करते हैं, कुरबानियाँ देते हैं, शैतान से छुटकारा प्राप्त करते हैं । और पाक होकर इस संकल्प के साथ वापस लौटते हैं कि अब वे कोई गुनाह नहीं करेंगे और ईश्वरीय आदेश के पालन में सतत प्रयत्नशील रहेंगे । हज एक ईश्वर पर विश्वास रखने वालों की एकता, समानता, अन्तर्राष्ट्रीयता और बन्धुत्व का प्रदर्शन भी है ।

हज केवल उन लोगों पर फ़र्ज़ है, जो वहाँ तक जाने का सामर्थ्य रखते हों । इसी प्रकार ज़कात उन लोगों पर फ़र्ज़ है, जिनके पास अपनी आवश्यकताओं का पूरा करने के बाद बचत होती हो, परन्तु नमाज़ और रोज़ा अमीर-ग़रीब, स्त्री-पुरुष सभी पर फ़र्ज़ है। आध्यात्मिक प्रगति के लिए इन चीज़ों के अतिरिक्त चिन्तन-मनन, स्मरण (ज़िक्र) और तिलावत (कुरआन का पाठ) भी ज़रूरी है। मुहम्मद (सल्ल०) ने अपने जीवन-काल में अपनी शिक्षाओं से जो समाज बनाया, उसमें ये गुण शत-प्रतिशत पाए जाते थे। आज के मुसलमानों में जो ख़राबी उत्पन्न हुई है, वह इन्हीं आध्यात्मिक उपायों को छोड़ देने तथा ठीक से इनको न अपनाने का दुष्परिणाम है ।

चतुर्थ अध्याय

आप (सल्ल०) के द्वारा संगठित समाज की विशेषता

अब आइये, यह देखें कि इन मौलिक सिद्धान्तों और आध्यात्मिक आधारों पर किस प्रकार के समाज का निर्माण हुआ है ?

आप (सल्ल०) ने मनुष्य पर से मनुष्य के शासन को समाप्त कर दिया और मनुष्य को प्रत्यक्ष रूप से ईश्वरीय शासन के अधीन किया। इस्लामी शासन-व्यवस्था में ख़लीफ़ा, जिसका मूल अर्थ प्रतिनिधि होता है, ईश्वर और समाज दोनों का प्रतिनिधित्व करता है और ईश्वर तथा समाज दोनों के सामने उत्तरदायी होता है। ख़लीफ़ा को ईश्वरीय आदेश के अन्तर्गत एक परामर्श-समिति द्वारा कार्य-सम्पादन का दायित्व सौंपा गया है । जनता पर केवल उसी समय तक ख़लीफ़ा के आदेशों के पालन करने की ज़िम्मेदारी है जब तक वह ईश्वरीय आदेश के अन्तर्गत आदेश देता है । अगर वह उससे हटता है, तो उसको हटा देने का जनता को पूरा अधिकार है ।

समानता और बन्धुत्व

आप (सल्ल०) ने मानव-एकता और समानता की ऐसी उद्‌घोषणा की और व्यावहारिक रूप से इसका ऐसा परिचय दिया कि विषमता की सारी दीवारें गिर गईं। आप (सल्ल०) ने अपने अंतिम हज के अवसर पर अपने एक लाख अनुयायियों का सम्बोधित करते हुए कहा—

"आज से जाहिलियत (इस्लाम से पूर्व) की सभी रस्में समाप्त हो गईं। अब किसी गोरे को काले पर , किसी काले को गोरे पर , किसी अरब को ग़ैर अरब पर और किसी ग़ैर अरब को अरबी पर कोई प्रधानता नहीं सिवाय इसके कि जिनका आचरण अच्छा हो, तो वह ईश्वर की दृष्टि में अधिक प्रतिष्ठावान है ।"

आपने एक - दूसरे अवसर पर कहा—

"तुम सब आदम की संतान हो और आदम मिट्टी से बनाए गये थे ।"

एक और अवसर पर आपने उद्‌घोषणा की—

"एक व्यक्ति के तुच्छ होने के लिए यही बात काफ़ी है कि वह अपने दूसरे भाई को अपने से तुच्छ समझता हो ।"

कुरआन में है कि जाति और क़बीले का अन्तर केवल पहचान के लिए है। कोई न पैदाइशी तौर पर पतित है और न पैदाइशी तौर पर प्रतिष्ठावान। यहाँ प्रतिष्ठा ख़ानदान और नस्ल से नहीं, अच्छे कर्म से मिलती है। अतः मानव-समाज में न कोई छोटा है और न अछूत है, न बड़ा। न कोई प्रतिष्ठा का पात्र है और न कोई घृणा का। यहां सब बराबर और एक समान हैं। इस्लामी समाज का नारा है— "केवल ईश्वर बड़ा है, बाक़ी सब बराबर हैं। धन सम्पत्ति, ज़ात-बिरादरी किसी आधार पर किसी को कोई प्रधानता नहीं।"

आप (सल्ल०) ने औरतों को समता और प्रतिष्ठा के समान स्तर पर लाकर बिठाया और मर्दों के साथ-साथ औरतों को भी तमाम सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक अधिकार प्रदान किए। आपसे पूर्व अरब तथा दुनिया के अन्य देशों में औरतों की दशा काफ़ी दयनीय थी। आप (सल्ल०) ने बेटी की पैदाइशी को शुभ बताया। औरतों के सम्मान की शिक्षा दी। ऐसा क्यों न हो औरत का हर रूप सुन्दर और पवित्र जो है। औरत माँ है, औरत बहन है, औरत पत्नी है, औरत बेटी है, औरत ही की कोख से मानवता जन्मी है। फिर इस औरत का अनादर मानवता का अनादर है। आज औरतों की आज़ादी के नाम पर उनके साथ जिस रूप में दुर्व्यवहार किया जा रहा है, ऐसा पहले कभी नहीं हुआ। आज औरत को नंगा नचवाया जाता है। उसके जिस्म की नुमाइश की जाती है। आधुनिकता के नाम पर उसका व्यापार किया जाता है। चन्द पैसों के बदले उसकी इज़्ज़त लूटी जाती है। उसे दफ़्तरों, होटलों और क्लबों में अपने नारीत्व का व्यापार करने के लिए आमंत्रित किया जाता है और आज की औरत आधुनिकता और फ़ैशन के नाम पर यह सब कुछ ख़ुशी-ख़ुशी सहन कर लेती है। वह बिना किसी सामाजिक उत्तरदायित्व के अपना जिस्म दूसरों के हवाले कर देती है। हाँ, वह कभी-कभी चीखती है, जब कोई उसकी इच्छा के विरुद्ध उसके साथ ज़बरदस्ती करता है। आधुनिक औरत आज़ादी के नाम पर भी ग़ुलाम हो गई है। वह एक मर्द की अपेक्षा डेढ़ गुना और दो गुना अधिक काम करती है। मर्द उसके प्राकृतिक कार्यों

में से किसी एक में भी भागीदार नहीं होता। लेकिन औरत अपने कार्य के अतिरिक्त मर्दों का कार्य भी करती है। फिर भी उसे मर्दों के बराबर मज़दूरी नहीं दी जाती।

आज इस्लाम द्वारा चार शादी की अनुमति और औरतों के पर्दे के हुक्म पर बहुत शोर मचाया जाता है, परन्तु हर घर को वेश्यालय बनने से रोकने की कोई चिन्ता नहीं की जाती। भारतीय समाज में बेटी का जन्म एक अभिशाप समझा जाता है और अब तो दिन-दहाड़े नव विवाहिता को जला दिया जाता है। आप (सल्ल०) ने औरतों पर होने वाले इन सभी अत्याचारों को समाप्त किया। आप (सल्ल०) ने कहा—

"जिसको ईश्वर ने तीन बेटी दी या उससे अधिक दी या एक कथन के अनुसार दो बेटी दी और उसने उनका सही तौर पर लालन-पालन किया तथा उनको अच्छी शिक्षा-दीक्षा दी और उनके बालिग़ होने पर उनकी शादी कर दी तो जन्नत में वह व्यक्ति और मैं एक-दूसरे के समीप होंगे।"

इस हदीस के उल्लेखकर्ता की उक्ति यह है कि अगर आपसे एक बेटी के बारे में पूछा जाता तो भी आप यही कहते। आपका मशहूर कथन है— "जन्नत माँ के क़दमों के नीचे है।" आप (सल्ल०) ने पत्नियों के प्रति अच्छे व्यवहार की शिक्षा दी और कहा—

"तुममें सबसे अच्छा आदमी वह है, जो अपने घर के लिए अच्छा हो और मैं तुममें सबसे अच्छा हूँ, क्योंकि मैं अपने घर-परिवार के लिए तुम सबसे अच्छा हूँ।"

आपने पराई औरतों को बुरी नज़र से देखने से मना किया और औरतों के साथ ज़िना (व्यभिचार) को जघन्य अपराध घोषित किया। जो व्यक्ति किसी औरत की इज़्ज़त लूटता है, अगर वह शादीशुदा है तो इतने पत्थर मारने का आदेश है कि वह मर जाए और अगर ग़ैर शादीशुदा है तो उसे सौ कोड़े मारने का आदेश है। इतना नहीं, अगर कोई व्यक्ति किसी मर्द या औरत पर झूठा लांछन लगाता है, तो उसे अस्सी कोड़े मारने का आदेश है। इस्लाम में औरत कोई बेज़ुबान जानवर

की तरह नहीं है कि चाहे उनके साथ जैसा व्यवहार किया जाए, वह जिस मर्द के साथ बँधी है, उससे कभी छुटकारा नहीं पा सकती। जिस प्रकार मर्दों को तलाक़ का अधिकार है, उसी तरह औरतों को "खुलअ" के माध्यम से छुटकारा प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त है। मुझे कोई न्यायसंगत रूप से बताए, क्या यह ज़ुल्म है? हज़रत ख़दीजा पहली महिला हैं, जिन्होंने सबसे पहले आप पर ईमान लाया। आप (सल्ल०) की केवल चार बेटियाँ थीं। आपका कोई बेटा जीवित नहीं रहा। इससे भी औरत का दर्जा बढ़ा है। इन सबका नतीजा यह है कि आज मुस्लिम-समाज में औरत को जो प्रतिष्ठा और सम्मान प्राप्त है, वह विश्व के किसी समुदाय में प्राप्त नहीं है।

आपने मज़दूरों के हितों की रक्षा की और समाज के कमज़ोर और निर्बल वर्ग को समर्थन प्रदान किया। आपने कहा– "मज़दूरों को उनकी मज़दूरी पसीना सूखने से पहले अदा कर दो।" आपने कहा– "जो कोई मज़दूर से काम कराने के बाद उचित मज़दूरी नहीं देता, मैं ईश्वर के यहाँ उसके विरुद्ध वक़ील बनूँगा।" उचित मज़दूरी का अभिप्राय यह है कि राष्ट्र के सामान्य जीवन-स्तर के अनुसार एक साधारण मज़दूर का जीवन-स्तर अवश्य होना चाहिए। आप (सल्ल०) ने व्यापारिक कार्यों में मज़दूरों को साझी बनाने का आह्वान किया और मज़दूरों को भी ईमानदारी तथा निष्ठा के साथ अपने कार्य-सम्पादन का आदेश दिया। आप (सल्ल०) ने ग़ुलामी-प्रथा का उन्मूलन किया। ग़ुलामों को आज़ाद करने के लिए लोगों को उभारा। उन्हें समानता प्रदान की।

आप (सल्ल०) ने महाजनी प्रथा को समाप्त कर दिया। सूद को वर्जित ठहराया, शोषण-चक्र को बिल्कुल रोक दिया और सामाजिक सुरक्षा के लिए व्यापक प्रबंध किए। आप (सल्ल०) ने समाज से व्यभिचार, भ्रष्टाचार, कुरीतियों और अशांति को दूर किया। आपने शराब, जुआ और सट्टे पर प्रतिबंध लगाया। जमाख़ोरी, चोर-बाज़ारी, रातों-रात धनवान बनने की लालसा पर रोक लगायी। मिलावट, कम तौलना, झूठ बोलकर ख़राब माल बेचना आदि को रोक दिया।

आदर्श सामाजिक ढाँचा

आपने जिस समाज का निर्माण किया उसमें बड़ों की प्रतिष्ठा, छोटे से प्रेम,

कमज़ोरों के प्रति सहानुभूति, बच्चों से प्यार, स्त्रियों का सम्मान, ग़ुलामों को बराबरी, मज़दूरों से उचित व्यवहार, क़ानून के प्रति जागरूकता और अन्याय के प्रति घृणा का वातावरण उत्पन्न हुआ। इस तरह दस साल के अन्दर आप (सल्ल०) ने मदीना में ऐसे आधुनिक इस्लामी समाज का निर्माण किया और एक ऐसे नमूने की शासन-व्यवस्था की आधारशिला रखी, जिसके आधार पर आज बड़ी आसानी से आधुनिक युग का निर्माण किया जा सकता है। ज्ञान और विज्ञान की प्रगति तथा तकनीकी विकास के कारण इस्लामी आदर्शों और शिक्षाओं का महत्व और भी बढ़ गया है। आप (सल्ल०) ने जिस समाज का गठन किया वह वर्ग-संघर्ष से मुक्त, सहनशीलता, पारस्परिक सम्मान, सहानुभूति और सहयोग का समाज था। ये किसी भी समाज के विकास के लिए अनिवार्य तत्व हैं। अगर हम आगे बढ़ना चाहते हैं, तो हमें इन आदर्शों को अपनाना होगा और इन शिक्षाओं का अनुकरण करना होगा।

जब आप २३ वर्ष के संघर्षपूर्ण जीवन के बाद व्यावहारिक रूप से इस्लामी समाज की स्थापना करके ६३ वर्ष की आयु में अपने ईश्वर से मिलने जाने लगे, तो आपने अपने सहयोगियों से कहा–

> **"मैं तुम्हारे बीच दो चीज़ें छोड़े जा रहा हूँ; पहली, ईश्वर की किताब क़ुरआन और दूसरी, अपने कार्य और अपनी शिक्षाएँ अर्थात् अपनी सुन्नत। अगर तुम इन दोनों को सख़्ती से पकड़े रहोगे तो कभी गुमराह नहीं होगे।"**

अब हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) हमारे बीच नहीं रहे, परन्तु आपकी छोड़ी हुई दोनों चीज़ें हमारे पास पूर्णतः प्रामाणिक रूप में सुरक्षित हैं। आइये, हम आज के मुसलमानों को न देखें, बल्कि क़ुरआन और सुन्नत को देखें और फिर अपने से सवाल करें कि क्या इसमें हमारे लिए कोई मार्ग-दर्शन है। अगर है, तो इसको जानें, समझें और अगर दिल गवाही दे कि यही एक सच्चाई है, तो बिना किसी भेद-भाव और संकोच के इसे अपनाएँ।

पंचम अध्याय

ग़ैर-मुस्लिमों के प्रति हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) का बर्ताव

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) काफ़ी दयालु और सहनशील थे। अपने पराये, दोस्त-दुश्मन सभी के प्रति आप (सल्ल०) के मन में प्रेम-भाव और दयालुता थी। आप किसी व्यक्ति को दुःखी नहीं देख सकते थे। चिड़ियों की फड़फड़ाहट और उनके किसी बच्चे का रोना आपको बेचैन कर देता था कि कहीं उनके घोंसले से किसी ने उनके बच्चे का शिकार तो नहीं कर लिया। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) समस्त प्राणियों के लिये, बल्कि इस पूरे ब्रह्माण्ड के लिये ईश्वर की ओर से दयालुता के प्रतीक हैं। आप (सल्ल०) की पत्नी हज़रत आइशा (रज़ि०) कहती हैं— "आपने कभी किसी व्यक्ति से अपने निज के लिये कोई बदला नहीं लिया।" शक्ति पाने के बाद माफ़ कर देना यह वह विजय-सूत्र था, जिसने आपके दुश्मनों को आपके सामने नत-मस्तक होने पर मजबूर कर दिया। हम आपके जीवन से कुछ उदाहरण प्रस्तुत करते हैं, जिससे अनुमान हो सकेगा कि आपका आपकी जान के दुश्मनों के साथ भी क्या बर्ताव था और आप (सल्ल०) ने ग़ैर-मुस्लिम नागरिकों के साथ कैसा व्यवहार किया?

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) मक्का नगर में रहते थे। सारा शहर आपकी इज़्ज़त करता था और आपसे मुहब्बत रखता था। आप (सल्ल०) इतने सच्चे थे कि लोगों ने आपको 'सादिक़' (अति सत्यवान) और आप (सल्ल०) इतने विश्वसनीय थे कि लोगों ने 'अमीन' (अति विश्वास-योग्य) की उपाधि दे रखी थी। वे लोग अपना माल आपके पास जमा रखते थे और अपने मामलों के फ़ैसले आप (सल्ल०) से कराते थे। पूरे शहर को आप (सल्ल०) पर गर्व था। जब यही हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने बहुदेववाद के बदले एक ईश्वर की इबादत और उपासना का आह्वान किया और स्वयं को ईश्वर का दूत घोषित किया, तो उन लोगों ने भी जो आपको अति सत्यवान मानते थे, झुठलाना शुरू कर दिया और हर संभव तरीक़े से आप (सल्ल०) का रास्ता रोकने को तैयार हो गए और इस क्रम में अन्याय और अत्याचार की सारी सीमाएं पार कर गए। आप (सल्ल०)

ने सदैव क्षमा और दरगुज़र को अपना शस्त्र बनाया। इस सिलसिले में कुछ घटनाएं निम्न हैं —

आप (सल्ल०) ने एक बार मक्का के सरदारों के सामने इस्लाम का संदेश प्रस्तुत किया, तो उन्होंने घृणा से मुंह फेर लिया और एक अशिष्ट व्यक्ति ने आपके मुंह पर थूक दिया। आप चाहते तो इसका बदला ले सकते थे, लेकिन आपने उसे माफ़ कर दिया।

एक बार आप काबा में नमाज़ पढ़ रहे थे, जैसे ही आप सजदे में गये कि एक व्यक्ति ने ऊंट की ओझड़ी-लीद आपके सिर पर डाल दी। बोझ इतना अधिक था कि आप सिर नहीं उठा सके। इतने में आपकी प्रिय पुत्री हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) दौड़ी हुई आईं और उन्होंने वह गन्दगी आपके सिर से हटाई। वे इस गन्दगी को धोती जाती थीं और रोती जाती थीं। साथ ही उन लोगों को कोस रही थीं, जिन्होंने आपके सिर पर यह गन्दगी डाली थी। लेकिन आपने कहा, "बेटी! धैर्य रखो, अल्लाह धैर्य रखने वालों के साथ है।" आपने कोई क्रोध प्रकट नहीं किया, कोई बदला नहीं लिया, कोई अभिशाप नहीं दिया।

इसी तरह एक बार आप (सल्ल०) काबा में नमाज़ पढ़ रहे थे कि एक व्यक्ति पीछे से आया और आपके गले में फंदा डाल कर घुमाना शुरू किया। यहां तक कि आपका चेहरा लाल हो गया और आंखों की पुतली बाहर आने लगीं। संयोग से हज़रत अबू बक्र (रज़ि०) आ गये और उन्होंने उस व्यक्ति को वहां से धक्के देकर हटाया और कहा— "तुम इस व्यक्ति को इसलिये मार डालना चाहते हो कि यह एक ईश्वर की उपासना की ओर बुलाता है।"

एक बूढ़ी औरत का वाक़या

मक्का की मुख्य सड़क पर एक बूढ़ी औरत रहती थी। वह धनवान थी। उसका प्रतिदिन का नियम था कि वह दिन भर का कूड़ा-करकट जमा करके रखती और जब कभी आप (सल्ल०) उस रास्ते से गुज़रते वह कोठे पर से आपके ऊपर कूड़ा डाल देती। आप (सल्ल०) कुछ नहीं कहते और कपडे झाड़ कर चल देते। एक दिन आप उस रास्ते से गुज़रे , लेकिन कूड़ा आप पर नहीं पड़ा। आपको बहुत आश्चर्य हुआ, आपने पूछा कि वह बूढ़ी औरत कहाँ है? मालूम हुआ वह

बीमार है। आप (सल्ल०) तुरन्त उसको देखने गये। पहले तो उसने आपको घृणा से देखा, परन्तु जब आपने बड़ी नम्रता से उसका हाल-चाल पूछा और उसकी बीमारपुर्सी करने लगे तो उसने पश्चाताप करते हुए आपसे माफ़ी माँगी। आपने कहा, "इसमें माफ़ी की कौन -सी बात है? तुम्हारे इस कार्य से तो हमारे अन्दर सहनशीलता बढ़ी है। इसके लिए मैं तुम्हारा आभारी हूँ।" यह बात सुनकर वह औरत बहुत लज्जित हुई और उसी क्षण उसने इस्लाम कुबूल कर लिया।

एक प्रस्ताव यह भी आया

कुरैश के बड़े-बड़े सरदार आप (सल्ल०) के चचा अबू तालिब के पास आये और उनके सामने प्रस्ताव रखा कि या तो मुहम्मद को अपने धर्म-प्रचार से मना करें या फिर लोगों से युद्ध करने के लिये तैयार हो जायें। या फिर ऐसा करें कि कुरैश के किसी उत्तम जवान को उनके बदले अपना बेटा बना लें और मुहम्मद (सल्ल०) को उनके हवाले कर दें। पहले प्रस्ताव के सिलसिले में अबू तालिब ने आपको समझाने का प्रयत्न किया, लेकिन दूसरे प्रस्ताव पर बिगड़ कर कहा कि यह तो अच्छी कही कि तुम्हारे बेटे को तो हम पालें और हमारे बेटे को तुम क़त्ल कर दो। जब उन्होंने उनके प्रस्ताव को ठुकरा दिया तो मक्का के सरदार उठ कर चले गये और आपस में एकजुट होकर मुहम्मद (सल्ल०) के पूरे परिवार का सामाजिक बहिष्कार कर दिया। अबू तालिब अपने पूरे परिवार को लेकर एक घाटी में जा रहे। मक्का वालों ने उन पर रसद-पानी सब बन्द कर दिया। वे न क्रय-विक्रय कर सकते थे और न किसी से मिल-जुल सकते थे। यह बहिष्कार तीन साल तक जारी रहा। इस बीच वे पेड़ के पत्तों और छाल तथा सूखे चमड़ों को भिंगोकर खाते रहे। उनके पास कुछ मवेशी थे, जिनका दूध दूह कर पीते और कभी-कभी उनका मांस भी खाते। लेकिन इस बीच आप (सल्ल०) ने कभी इन अत्याचारों का कोई जवाब नहीं दिया और न उन लोगों के प्रति बद्दुआ की, बल्कि धैर्यपूर्वक सब कुछ बर्दाश्त करते रहे। अपने सहयोगियों को सांत्वना देते रहे कि इस अन्यायपूर्ण स्थिति का अन्त अवश्य होगा।

आपके साथियों पर अत्याचार

न केवल यह कि लोग आप (सल्ल०) के साथ निर्दयतापूर्ण बर्ताव करते,

बल्कि आपके साथियों को भी तरह-तरह से सताते। आप (सल्ल०) पर ईमान लाने वाले अधिकतर लोग युवा वर्ग के थे। इनमें स्त्रियां भी थीं और वे दास भी थे, जो समाज के अत्यन्त कमज़ोर तथा शोषित वर्ग से सम्बन्ध रखते थे। मुहम्मद (सल्ल०) पर हाथ उठाते हुये लोग इस बात से डरते थे कि कहीं उनके कुटुम्ब के लोग उनके विरुद्ध न खड़े हो जायें और पुनः क़बाइली लड़ाई की आग न भड़क उठे, परन्तु इन कमज़ोर वर्गों के लोगों पर अन्याय और अत्याचार की कोई सीमा नहीं थी। किसी को चटाई में लपेट कर धुकनी दी जाती, तो किसी को तपती हुई रेत पर लिटा कर उसके सीने पर भारी पत्थर रख दिया जाता और जब इस पर भी सन्तोष नहीं होता तो उनके टांग में रस्सी बांधकर पूरे मक्के में घसीटा जाता। किसी को कोयला जला कर उसी आग पर लिटाया जाता और उस समय छोड़ा जाता जब उसके जिस्म की चर्बी से आग बुझ जाती। किसी की हत्या कर दी जाती और जो जहां चाहता मारता-पीटता तथा अपमानित करता।

अबू तालिब के देहान्त के बाद स्थिति और भी गम्भीर हो गई और मक्का के सरदारों के हौसले बहुत बढ़े गये। स्थिति जब असहनीय हो गई तो आप (सल्ल०) ने अपने साथियों को हब्शा (इथोपिया) रवाना कर दिया और स्वयं मक्का से कुछ दूर ताइफ़ चले गये कि शायद वहां कुछ शान्ति मिले। परन्तु ताइफ़ में आपके साथ और भी बुरा बर्ताव किया गया। वहां के सरदारों ने आपका मज़ाक़ उड़ाया। आपको अपमानित किया। यहां तक कि जब आप हताश होकर लौटने लगे तो शहर के गुण्डों और कुत्तों को आपके पीछे लगा दिया और उन लोगों ने पत्थर मार-मार कर आपको लहू-लुहान कर दिया। जब आप ज़ख़्म को न सहन कर पाते और बेहोश होकर गिर जाते, तो आपके दोनों हाथ पकड़ कर उठाते और ज़बरदस्ती चलाते और फिर पत्थर मारते। एक बार जब हज़रत आयशा (रज़ि०) ने आपसे पूछा कि आपके लिये सबसे कठिन दिन कौन-सा था तो आपने कहा, "ताइफ़ का दिन।" स्थिति इतनी भयावह थी कि पूरा ब्रह्माण्ड कांप रहा था। इस हाल में आपने दुआ के लिये हाथ उठाया और कहा—

"हे अल्लाह! मैं अपनी दुर्बलता और अपनी त्रुटियों और लोगों में अपने अपमान की शिकायत तुझी से करता हूँ। हे

कृपानिधान ! तू ही निर्बल को उन्नति के शिखर पर पहुंचाने वाला है, तू ही देख-रेख करने वाला है। तू मुझे किसके हवाले कर रहा है ? ऐसे दूरवर्ती के जो मेरे साथ कठोरता से पेश आये, ऐसे शत्रु के, जिसको मुझ पर अधिकारी बना दिया है। अगर मुझ पर तेरा क्रोध नहीं है तो फिर मैं कोई परवाह नहीं करता। लेकिन तेरे एहसान में मेरे लिये अधिक समाई है। मैं तेरे रुख़ के उस प्रकाश की पनाह लेता हूँ, जिससे लोक-परलोक के मामले संवर जाते हैं। इस बात से मुझ पर तेरा प्रकोप हो या तेरा क्रोध हो। तेरी रज़ाभन्दी की चाहत है, यहां तक कि तू राज़ी हो जाय। तेरे सिवा किसी में न संकट दूर करने की क्षमता है और न लाभ प्रदान करने की।"

— इब्ने हिशाम

जब आपने यह दुआ की तो अल्लाह ने हज़रत जिबरील के साथ पहाड़ों पर तैनात फ़रिश्ते को आपके पास भेजा, जिसने कहा कि अगर आप आज्ञा दें, तो मक्के और ताइफ़ के दोनों तरफ जो पहाड़ हैं, उन लोगों पर ऐसे गिरा दिये जायें कि वे सब दब कर रह जायें। आपने कहा—

"नहीं, मैं नबी-ए-अज़ाब (यातना का नबी) नहीं हूँ, बल्कि नबी-ए-रहमत (दया का नबी) हूँ। मुझे आशा है कि इनकी आने वाली नस्ल से ऐसे लोग पैदा होंगे, जो केवल एक ईश्वर की इबादत करेंगे और किसी को उसका साझी नहीं बनायेंगे।"

यह था वह जवाब, जो हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने दिया। देखिये, इसमें कितनी दयालुता है ! कैसी करुणा है, कैसा मानव-प्रेम है, लोगों की भलाई की कैसी अभिलाषा है ! इनके बचाव की कैसी चिन्ता है ! क्या मानव-इतिहास में ऐसी कोई दूसरी मिसाल मिलती है ? इतना ही नहीं, जब मक्का की विजय के बाद ताइफ़ के वही सरदार आत्म-समर्पण हेतु मदीना आये, तो आप (सल्ल०) ने पुरानी बातों की चर्चा तक नहीं की। आपने उन सब को क्षमा कर दिया और वे सम्मानपूर्वक घर लौट गए। उनको बहुत-सा उपहार भी दिया। इस प्रकार आप (सल्ल०) की आशा शत-प्रतिशत पूरी हुई।

कुरैश के आतंक और प्रकोप से तंग आकर जब आप (सल्ल०) पर ईमान लाने वाले कुछ लोग हब्शा चले गये, तो वहां भी कुरैश ने उनका पीछा नहीं छोड़ा। उन्होंने ईसाई पादरियों को घूस देकर चाहा कि राजा किसी तरह इन मुसलमानों को अपने देश से निकाल दें। राजा ने उन मुसलमानों को अपने दरबार में बुलाया, ताकि असलियत मालूम हो सके। राजा के दरबार में मुसलमानों का प्रतिनिधित्व करते हुये हज़रत ज़ाफर (रज़ि०) ने राज-दरबार में जो भाषण दिया, वह इतिहास में अमर हो गया। उन्होंने राजा को संबोधित करते हुए कहा—

"हे राजा ! हमारी क़ौम की हालत यह थी कि हम सब बुतों की पूजा करते, मरा हुआ जानवर खाते, बुरे कार्य करते। अपने ख़ून के रिश्ते को तोड़ते थे। पड़ोसियों को सताते थे। हमारे बलवान कमज़ोरों को दबाते थे। यह हमारी दशा थी। इसी बीच ईश्वर ने हम ही में से एक व्यक्ति को रसूल (दूत) बनाकर भेजा जिसकी शराफ़त, सच्चाई, अमानतदारी, पाकदामनी से हम लोग भली-भांति परिचित थे। उन्होंने हमको ईश्वर की ओर बुलाया और कहा कि हम ईश्वर को एक मानें और उसकी भक्ति तथा आज्ञापालन करें और हम और हमारे पूर्वज ने एक ईश्वर को छोड़कर जिन पत्थरों और प्रतिमाओं की पूजा शुरू कर दी है, उनकी पूजा छोड़ दें। सच बोलें, अमानत में ख़ियानत न करें, संबंधियों के साथ दयालुता का व्यवहार करें, पड़ोसियों से अच्छे बतार्व करें, हराम बातों से बचें, रक्तपात छोड़ दें, बुरी बातें छोड़ दें, झूठ न बोलें, अनाथों का माल न हड़पें, चरित्रवान स्त्रियों पर लांछन न लगायें। उन्होंने हमसे कहा कि एक ईश्वर के सिवा किसी की पूजा न करें और किसी को उसका साझी न ठहरायें, नमाज़ पढ़ें, ज़कात दें। हम लोगों ने उनकी बात मानी और उन पर ईमान लाये और जो कुछ उन्होंने ईश्वर की ओर से प्रस्तुत किया, हम ने उसका अनुसरण किया। उन तमाम बातों को हलाल (वैध) जाना जो उन्होंने हलाल बताया और उन तमाम चीज़ों को हराम

(अवैध) समझा जो हम पर हराम ठहराई गईं। बस इसी जुर्म पर हमारी क़ौम हमारी दुश्मन हो गई और उन लोगों ने हम पर अत्याचार और अन्याय किये और उन्होंने हमें दुःख दिया, ताकि हम एक ईश्वर की भक्ति छोड़ कर फिर बुतों की पूजा करने लगें, यहां तक कि वे हमें यहां से भी निकलवाना चाहते हैं।"

वास्तव में यही वह आह्वान था हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) और उनके साथियों का, जिनके कारण अरब के बहुदेववादी इनके दुश्मन हो गये थे, लेकिन संकट की हर घड़ी में आप (सल्ल०) ने और आपके साथियों ने संयम से काम लिया और अपना हाथ रोके रखा।

बाद में स्थिति इतनी बिगड़ गई कि अब मक्का में किसी मुसलमान का रहना असंभव हो गया। जब मक्का वालों ने अन्ततः यह फ़ैसला कर लिया कि मुहम्मद (सल्ल०) को क़त्ल ही कर देना है तो ईश्वर की ओर से आदेश हुआ कि आप (सल्ल०) मदीना चले जायें।

एक ओर अरब के मुशरिकों (बहुदेववादियों) को आप (सल्ल०) से इतनी घृणा हो थी, दूसरी ओर पूरे शहर में लोगों को सबसे अधिक विश्वास भी केवल आप ही पर था। दुश्मनी के बावजूद लोग अपनी अमानतें आपके ही के पास जमा रखते थे। जिस समय हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) मक्का से मदीना जा रहे थे, अगर आप (सल्ल०) अपने दुश्मनों का सारा माल, जो आपके पास जमा था, ज़ब्त कर लेते तो आज किसी को यह कहने का हक़ नहीं होता कि आपने ग़लत किया। किन्तु आपने ऐसा नहीं किया, बल्कि हज़रत अली (रज़ि०) को यह आदेश दिया कि वह उस समय तक मदीना नहीं रवाना होंगे, जब तक कि धरोहर रखने वालों का एक-एक पैसा न लौटा दें। क्या विश्व-इतिहास में ऐसा कोई दूसरा उदाहरण है?

इन बातों को पढ़ने के बाद एक व्यक्ति यह कह सकता है कि ये सब बातें उस समय की हैं, जब हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) और उनके अनुयायी बहुत कम थे और कमज़ोर थे। अतः उनके लिये इन अन्याय और अत्याचारों के सहन करने के अतिरिक्त कोई उपाय नहीं था।

आइये, हम मुहम्मद (सल्ल०) के जीवन के उस दौर को भी देखते चलें जबकि आप (सल्ल०) को शक्ति मिली और राज्य-सत्ता आपके हाथ में आई, आपकी दुर्बलता दूर हो गई और आपके अनुयायियों की संख्या बहुत अधिक हो गई। आइये, देखें इस दौर में आपने ग़ैर-मुस्लिमों के साथ कैसा व्यवहार किया?

यहूदियों से समझौता

आप जैसे ही मदीना आये, आपने सबसे पहले मदीना में आबाद यहूदियों से समझौता किया। यह बात याद रखने की है कि मदीना में आप (सल्ल०) शरणार्थी के रूप में नहीं, बल्कि एक शासक के रूप में आये थे। यहूदियों से जो समझौता किया था, उसमें अन्य बातों के अतिरिक्त ये बातें भी सम्मिलित थीं–

१. यहूदी भी मुसलमानों की तरह एक क़ौम समझे जायेंगे, जो कोई उनसे लड़ेगा तो मुसलमान यहूदियों की मदद करेंगे।

२. मुसलमान और यहूदियों के संबंध दोस्ती और भलाई पर आधारित होंगे, एक-दूसरे को लाभ पहुंचायेंगे और एक-दूसरे से अच्छा व्यवहार करेंगे।

३. यहूदियों के सहयोगी भी उनके साथ सम्मिलित हैं, मज़लूमों (उत्पीड़ित लोगों) की हमेशा मदद की जायेगी।

४. इस समझौते में सम्मिलित लोगों के लिये मदीना के आन्तरिक जीवन में अशांति फैलाना अवैध होगा, पड़ोसी की रक्षा अपनी जान की तरह करनी होगी, न तो कोई किसी को नुक़सान पहुंचायेगा और न कोई अपराध करेगा।

५. क़ुरैश और उनके सहयोगियों को शरण नहीं दिया जायेगा। मदीना पर यदि कोई हमला करेगा तो दोनों फ़रीक़ (पक्ष) मिलकर एक-दूसरे की मदद करेंगे।

यह इस्लामी राज्य की ओर से किसी ग़ैर-मुस्लिम प्रजा से पहली संधि थी, जिसका एक-एक शब्द बता रहा है कि यह संधि एक-दूसरे के पारस्परिक हितों

को ध्यान में रखकर की गयी थी ।

क़ैदियों के प्रति व्यवहार

मक्का के क़ुरैश के आतंक से तंग आकर आप (सल्ल०) और आपके सहयोगियों ने मदीना में पनाह ली । शुरू में तो क़ुरैश ने मदीना-वासियों से आग्रह किया कि उन लोगों को अपने यहां से निकाल दें, फिर धमकी दी कि यदि उन्होंने इन लोगों को नहीं निकाला तो उन पर हमला कर दिया जायेगा । और अभी जाकर बसने भी नहीं पाये थे कि सन् २ हिजरी (६१५ ई.) में क़ुरैश ने मदीना पर हमला कर दिया । लेकिन ईश्वर की सहायता से उन्हें मुंह की खानी पड़ी और उनके बड़े-बड़े सरदार इस लड़ाई में मारे गये तथा बहुत-से लोग क़ैदी बना लिये गये । उस समय कोई जेल नहीं थी, इसलिये इन तमाम क़ैदियों को मदीना की आबादी में बांट दिया गया और आप (सल्ल०) ने सभी को ओदश दिया उन्हें अपने से बेहतर खिलाओ और जिनके पास कपड़े नहीं हैं उन्हें कपड़े दो । दुनिया ने देखा कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) और आपके साथियों ने ख़ुद भूखे रहकर अपनी जान के दुश्मनों और धर्म-शत्रुओं को खिलाया, स्वयं जौ की रोटी खाई और उन्हें गेहूं की रोटी खाने को दी ।

एक रात आपके कान में किसी के कराहने की आवाज़ आई । आपकी नींद टूट गई । बाहर निकल कर देखा कि एक क़ैदी जकड़ कर बांधा हुआ है और वह पीड़ा के कारण कराह रहा है । आपने तुरन्त उसको खोलवा दिया और इस तरह बाँधने की हिदायत की, जिससे तकलीफ़ न हो । यह आप (सल्ल०) ही थे, जिसने कुछ ऐसे क़ैदियों को, जो लिखना-पढ़ना जानते थे, लेकिन निर्धन होने के कारण जुर्माने में कोई रक़म नहीं दे सकते थे, केवल इस शर्त पर माफ़ कर दिया कि वह मदीना के दस बच्चों को लिखना-पढ़ना सिखा दें । विश्व-इतिहास ऐसा कोई प्रमाण प्रस्तुत करने में असमर्थ है ।

कुछ और मिसालें

शत्रुओं ने आपको मक्का से निकाल दिया और आप पर हमला भी किया । आपके चले जाने के बाद मक्का में भीषण अकाल पड़ा । बहुत-से लोग भूख से मरने लगे । सूखी हड्डियाँ चूसने और मुर्दा खाने लगे । आप (सल्ल०) को दया

आई । आपने ऊंट से लदा अनाज मक्का भेजा और इसके अतिरिक्त पांच सौ दिरहम नक़द भी । साथ ही, पानी के लिये ईश्वर से दुआ (प्रार्थना) की । ख़ूब पानी बरसा । इस तरह यह संकट दूर हुआ । दुनिया जानती है कि मदीना पहुंचने के बाद भी आप (सल्ल०) को शत्रुओं ने एक दिन भी चैन से नहीं रहने दिया । वे हर साल मदीने पर चढ़ाई करते और किसी तरह आपको और आपके साथियों को विनष्ट कर देने के लिए षड्यंत्र रचते । संधि करने के बाद भी मदीना के यहूदी अन्दर-ही-अन्दर क़ुरैश से मिले हुये थे और मुनाफ़िक़ों (पाखंडियों Hyprocrits) का एक गिरोह भी उसमें सम्मिलित हो गया था ।

इस गिरोह का सबसे बड़ा सरदार अब्दुल्लाह बिन उबई था । वह अत्यन्त दुष्ट आदमी था और हर समय षड्यंत्र रचता रहता था । उहद के युद्ध के अवसर पर वह रास्ते से अपने तीन सौ सहयोगियों के साथ लौट आया । वह हर तरह लांछन लगाने और लड़ाई करने की कोशिश करता । उसने हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को क़त्ल करने का प्रयास भी किया था । लेकिन आपने यह सब दुःख बर्दाश्त किया, यहां तक कि वह मर गया । उसके बेटे ने जो एक अच्छे मुसलमान थे, आप (सल्ल०) से अपने बाप के कफ़न के लिए तबर्रुक के तौर पर आपका कुर्ता मांगा, मुसलमानों के विरोध के बावजूद आपने उसको अपना कुर्ता दे दिया ।

यमामा के एक सरदार समामा बिन असाल इस्लाम क़ुबूल करने के बाद जब मक्का गये तो मक्का वालों ने उनकी बड़ी भर्त्सना की । उन्होंने क्रोध में उस रास्ते को बंद कर दिया, जहां से होकर मक्का वालों का अनाज पहुंचता था । मक्के में अकाल पड़ गया । अन्ततः इन लोगों ने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से निवेदन किया तो आपने यमामा बिन असाल को प्रतिबंध हटा लेने का आदेश दिया ।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने मदीना के यहूदियों की भलाई के लिए क्या-क्या नहीं किया । उनको बराबरी का स्थान दिया, सम्मान दिया, उनकी रक्षा की, लेकिन वे थे कि दुश्मनी पर तुले रहे और संधि करने के बाद भी मुकरते रहे और हर समय आप (सल्ल०) को क़त्ल करने का षड्यंत्र रचते रहे । ख़ैबर में एक यहूदी औरत ने आपके खाने में ज़हर मिलया दिया । अभी आपने खाना शुरू ही किया था कि आपको पता चल गया, लेकिन आपके दो साथियों ने दो-चार

निवाला खा लिया था, जिसके कारण एक की मृत्यु हो गई। दरअसल यहूदियों ने षड्यंत्र रचकर आपके खाने में यह ज़हर उस औरत से दिलाया था। परन्तु आपने केवल उस औरत को सज़ा दी, क्योंकि एक व्यक्ति की हत्या हो गई थी और पूरे क़बीले को माफ़ कर दिया।

इस तरह की अनेक घटनाएं सीरत की किताबों में भरी पड़ी हैं। आपने उमेर बिन वह्ब को माफ़ कर दिया, जो मक्का से मदीना आपको क़त्ल कर देने के इरादे से आये थे। इसी प्रकार आपने अस्सी आदमियों के उस गिरोह को माफ़ कर दिया, जो अचानक हमला करके आपको शहीद कर देना चाहता था।

एक बार आप (सल्ल०) एक पेड़ के नीचे सोये हुये थे और आपकी तलवार उस पेड़ से लटक रही थी। एक व्यक्ति, जो ताक में था, ने तलवार उठा ली और जैसे ही आप (सल्ल०) पर हमला करना चाहा आपकी आंख खुल गई। उसने पूछा, "बताओ, अब तुमको हमसे कौन बचायेगा?" आपने इत्मीनान से जवाब दिया, "अल्लाह।" इस जवाब से वह इतना भयभीत हुआ कि उसके हाथ से तलवार गिर गई। आपने तलवार उठा ली और उसे माफ़ कर दिया।

इस्लाम ने जो शिक्षा दी वह यह है कि बुराई का बदला हमेशा भलाई से दो। क़ुरआन कहता है—

> "बुराई का बदला अच्छाई से दो, फिर जिस व्यक्ति से तुम्हारी दुश्मनी है, वह तुम्हारा सरगर्म दोस्त हो जायेगा।" —४१ : ३४

आप देखेंगे कि आप (सल्ल०) के जीवन का हर कार्य क़ुरआन की इस आयत की मुंह बोलती तस्वीर है। मुसलमानों को संकट के दिनों में नज्जाशी (इथोपिया के राजा) ने संरक्षण प्रदान किया था। जब उसका एक प्रतिनिधिमंडल मदीना पहुंचा, तो आप (सल्ल०) ने स्वयं उसकी सेवा की। सहाबा ने इसके लिए अपने आप को पेश किया तो आप (सल्ल०) ने कहा—

> "इन लोगों ने हब्शा (इथोपिया) में हमारे साथियों का सम्मान किया था। इसलिये मैं चाहता हूँ कि स्वयं इनकी ज़रूरत पूरी करूं।"

ईसाइयों से संधि और उनके प्रति आप (सल्ल०) का व्यवहार

नजरान से ईसाइयों का एक प्रतिनिधिमंडल मदीना आया, तो आप (सल्ल०) ने उसका आदर-सत्कार किया। अपनी मस्जिद में उसको जगह दी और उसको अपने तरीक़े पर इबादत करने की अनुमति दी। जब मुसलमानों ने उसे इससे रोकना चाहा, तो आपने उनको मना किया। जब नजरान के ईसाइयों ने आत्म-समर्पण कर दिया और ख़िराज देने का वायदा किया, तो आपने इन शब्दों में एक संधि-पत्र लिखकर उनको दिया—

१. नजरानवासियों को अल्लाह की सुरक्षा और अल्लाह के रसूल मुहम्मद (सल्ल०) की ज़मानत प्राप्त होगी। उनकी जान, धर्म, ज़मीन और सम्पत्ति को पूर्ण संरक्षण प्राप्त होगा। इस ज़मानत में सभी हाज़िर और ग़ैर हाज़िर उनकी क़ौम तथा उनके सहयोगी सम्मिलित होंगे।
२. उनकी वर्तमान स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं होगा।
३. उनके अधिकारों में से कोई अधिकार बदला नहीं जायेगा।
४. और जो कुछ उनके क़ब्ज़े में है, उसमें कोई परिवर्तन नहीं होगा।

यह पहली संधि थी, जो आपने एक शासक के रूप में किसी ग़ैर-मुस्लिम क्षेत्र के उन लोगों से की थी, जो स्वेच्छा से एक संगठित इस्लामी राज्य के अधीन आने को तैयार थे।

इस सन्दर्भ में हुदैबया-संधि का उल्लेख करना समीचीन होगा। हुज़ूर और उनके साथी हज करने के इरादे से मक्का के लिए रवाना हुए, लेकिन मक्का वालों को यह बात पसंद नहीं थी। वे हर क़ीमत पर मुसलमानों को रोकना चाहते थे। आप (सल्ल०) ने उन्हें लाख समझाया, लेकिन वे नहीं माने। अन्ततः कुछ शर्तों पर एक समझौता हुआ, जिसको "सुलहे हुदैबिया" कहते हैं। उसमें शर्त यह तय पायी गयी कि जो मक्के से मदीना भाग कर जायेगा, उसे आप (सल्ल०) वापस कर देंगे, लेकिन जो मदीना से मक्का भाग कर आयेगा, वह वापस नहीं किया जायेगा। अभी यह बात तय ही हो रही थी और समझौता-पत्र लिखना बाक़ी ही था कि क़ुरैश की ओर से आये हुये प्रतिनिधिमंडल के नेता के पुत्र अबू जन्दल इस

हाल में वहां पहुंचते हैं कि उनके हाथ जंज़ीर से बंधे हैं, किसी तरह घिसट कर आये हैं। वे चूंकि मुसलमान हो चुके हैं, इसलिए उनको यह सज़ा दी गई है। वे आपसे सहायता मांगते हैं और अपने साथ ले चलने का आग्रह करते हैं। आप (सल्ल०) ने सुहैल से कहा कि चूंकि अभी संधि-पत्र लिखा नहीं गया है, इसलिये इसको अपवाद मान कर संधि की जाये। लेकिन वह नहीं माना। अन्ततः आपने अबू जन्दल से वापस जाने को कहा और धैर्य रखने की सलाह दी। आपके सहयोगी इस बात पर बहुत दुखी हुए, परन्तु आपने उनको सांत्वना दी। जब समझौता-पत्र लिखा जा रहा था तो वह इस प्रकार शुरू किया गया कि "अल्लाह के रसूल मुहम्मद (सल्ल०) की ओर से।" इस वाक्य पर सुहैल ने आक्षेप प्रकट किया और कहा कि यदि हम आपको रसूल मानते तो लड़ते ही क्यों? उसने इन शब्दों को हटाने के लिए कहा। हज़रत अली (रज़ि०), जो समझौता-पत्र लिख रहे थे, इन शब्दों को काटने के लिये तैयार नहीं हुए, तो आपने स्वयं अपने हाथ से उनको मिटा दिया और उनकी जगह पर मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह लिखवाया। इतना संयम, इतना आत्म-नियंत्रण और इतनी उदारता, क्या इसकी कोई कल्पना भी की जा सकती है? यहां यह नहीं समझना चाहिये कि आप कमज़ोर थे, बल्कि इससे पहले कई बार क़ुरैश आप (सल्ल०) से युद्ध में पराजित हो चुके थे। फिर भी आपने उनके तमाम अपमानजनक व्यवहार पर संयम से काम लिया कि शायद वे शान्ति पूर्ण ढंग से ही सुधर जायें।

मक्का-विजय

मक्का-विजय के दिन एक व्यक्ति कहता है कि आज ख़ूब रण जमेगा, क़ुरैश से एक- एक करके बदला लेंगे। आप (सल्ल०) ने सुना तो उसके हाथ से झंडा छीन लिया। मक्का पर विजय बिना रक्तपात के हुई। आपने ऐसी जंगी चाल चली कि क़ुरैश को पता नहीं चला और आप दुश्मन के सिर पर पहुंच गये तथा चारों ओर से घेरा डाल दिया क़ुरैश निःसहाय होकर आत्म-समर्पण करने पर मज़बूर हो गये। आज क़ुरैश का कलेजा मुंह को आ रहा है। उन्हें अपना एक-एक अत्याचार याद आ रहा है। वे डरे-सहमे हैं कि पता नहीं मुहम्मद (सल्ल०) आज उनके साथ क्या बर्ताव करते हैं। वे सुनते आये थे कि जब

विजयी-सेना किसी पराजित भूमि में प्रवेश करती है तो हत्या, लूटपाट, बलात्कार और न जाने क्या-क्या करती है। सब लोग घबराये हुए और परेशान थे। आपने लोगों की यह स्थिति देखी तो सभी को एक जगह जमा होने का आदेश दिया। जब सब लोग जमा हो गये तो आपने पूछा– "तुम लोग मेरे बारे में क्या समझते हो?" सभी ने कहा– "आप एक शरीफ़ बाप के बेटे हैं और एक शरीफ़ भाई हैं।" आपने घोषणा की, "जाओ आज तुम पर कोई पकड़ नहीं, तुम सब को क्षमा किया जाता है।"

इतना ही नहीं, आपने घोषणा की कि जो काबा में चला जायेगा वह सुरक्षित है; जो अबू सुफ़यान के घर में शरण ले ले वह सुरक्षित है; जो अपने घर में बैठे रहें वे सुरक्षित हैं।" कहने का अर्थ यह कि पूरी आबादी को क्षमादान मिल गया। किसी से कोई पूछताछ नहीं हुई, न किसी को अपमानित किया गया और न किसी को सज़ा दी गई। यही वह विजय-सूत्र था, जिसने मक्का वालों का दिल जीत लिया और वे स्वेच्छा से इस्लामी बन्धुत्व के दायरे में चले आये।

आप जानते हैं कि यह अबू सुफ़यान कौन थे? यह वही हैं जिन्होंने बद्र की जंग से लेकर मक्का की विजय तक जितनी जंगें हुई थीं, उनमें दुश्मन सेना का नेतृत्व किया था। मक्का-विजय पर उनके घर को एक सुरक्षित स्थल बना दिया। मानव-इतिहास में ऐसा कोई प्रमाण नहीं मिलता कि शत्रु को भी सम्मान दिया गया हो।

हिन्दा नामक एक औरत डरते हुए आप (सल्ल०) के पास आयी। उसने आपके चचा हज़रत हमजा का कलेजा कच्चा चबाया था और उनकी नाक-कान काट कर अपने गले का हार बनाया था। उसकी टेढ़ अभी तक समाप्त नहीं हुई थी, परन्तु आप (सल्ल०) ने उसको भी क्षमा कर दिया।

वहशी, जिसने छुप कर हज़रत हमजा का क़त्ल किया था, आता है क्षमा-याचना करता है। आप (सल्ल०) उसको भी माफ़ कर देते हैं। केवल इतना कहते हैं कि वह आपके सामने न आया करे, क्योंकि इससे आप (सल्ल०) को चचा की याद आती है और दुःख होता है।

इस्लाम दुश्मन अबू जहल के बेटे इक्रिमा मक्का-विजय के बाद भाग रहे हैं,

उनकी पत्नी मुसलमान हो चुकी थी। वह उन्हें अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के पास लाती हैं। आप न केवल उनको माफ़ कर देते हैं, बल्कि उनके सम्मान में उठकर खड़े हो जाते हैं और दौड़कर उनका स्वागत करते हैं।

सफ़वान बिन उमैया, जिन्होंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को क़त्ल करने के लिए एक आदमी को इनाम का लालच देकर भेजा था, मक्का-विजय के अवसर पर भाग रहे हैं। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को जब ख़बर हुई, तो आपने उनको माफ़ी दी और सम्मान के साथ घर जाने दिया।

हेवार बिन असवद ने आपकी सुपुत्री हज़रत ज़ैनब को ऊंट से गिरा दिया था। वे उस समय गर्भवती थीं, जिसके कारण उनका गर्भपात हो गया और उसी रोग में मर गईं। हेवार बिन असवद ने बाद में आकर माफ़ी मांगी। आप (सल्ल०) ने उसे भी क्षमा कर दिया।

इस तरह की कितनी घटनाएं गिनाई जायें। इसके लिये पूरी किताब भी काफ़ी नहीं है।

निष्पक्ष न्याय

आप (सल्ल०) ने कभी पक्षपात नहीं किया और इन्साफ़ के मामले में कभी अपने समुदाय का पक्ष नहीं लिया, बल्कि हमेशा इन्साफ़ से काम लिया चाहे उसकी चोट किसी पर भी पड़ती हो। क़ुरआन ने न्याय का जो सूत्र बताया, आप (सल्ल०) उसका हर क्षण पालन करते रहे।

क़ुरआन में है– "किसी क़ौम की शत्रुता तुम्हें इतना न उभार दे कि तुम इंसाफ़ से दूर हो जाओ।" —५ : २

एक दूसरी जगह और स्पष्ट आदेश देते हुए कहा–

"हे ईमान लाने वालो ! न्याय के साथ खड़े रहने वाले बनो और अल्लाह के लिये गवाही देने वाले बन जाओ, चाहे तुम्हारी गवाही स्वयं तुम्हारे विरुद्ध या तुम्हारे माता-पिता या सगे-संबंधियों के विरुद्ध ही क्यों न हो। कोई अमीर हो या ग़रीब। अल्लाह उन दोनों से ज़्यादा क़रीब है। तो तुम न्याय करने में (अपनी तुच्छ)

इच्छाओं का पालन न करो यदि तुम टेढ़ करोगे या कतराओगे, तो जो कुछ तुम करते हो अल्लाह उसकी ख़बर रखने वाला है।"

—४ : १३५

यही कारण है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के दरबार में आपको बेलाग इंसाफ़ मिलेगा। यहां दोस्त, दुश्मन, काफ़िर (इन्कारी), मुशरिक, मुसलमान, मर्द, औरत, अमीर, ग़रीब, छोटे-बडे किसी को कोई रियायत नहीं। इन्साफ़ के मामले में न कोई अपना है और न कोई पराया, बल्कि सब एक समान हैं।

एक यहूदी ने एक मामले की शिकायत की। आप (सल्ल०) ने तुरन्त उस मुसलमान को बुलाया। वस्तुस्थिति की जानकारी प्राप्त की। मुसलमान दोषी था। आप (सल्ल०) ने उसको सज़ा दी। इस तरह की अनेक मिसालें हैं, जिनमें आपने मुसलमान के विरुद्ध और किसी ग़ैर-मुस्लिम के हक़ में फ़ैसला दिया है। इतिहास और आप (सल्ल०) के जीवन-चरित्र पर लिखी गई किताबें इस प्रकार के फ़ैसलों से भरी पड़ी हैं। इस्लाम में बच्चे-बूढ़े, औरत और अपाहिज पर हाथ उठाना हराम है। जो आपसे नहीं लड़ता, उससे लड़ना और मारना घोर अपराध है। खेतियों और बाग़ों को तबाह करना, मवेशियों को लूट लेना या उनको तकलीफ़ देना मना है। यह क़ानून शान्ति-काल में भी लागू होता है और युद्ध काल में भी।

यही वह बात है जिसको क़ुरआन ने कहा–

"धर्म में कोई ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं है। सही बात ग़लत बात से छांट कर अलग कर दी गयी है।"

इस्लाम लोहे की तलवार से नहीं, प्रेम और सेवा की तलवार से फैला है। यही कारण है कि जो कल तक जान के दुश्मन थे और पूरी शक्ति लगाकर उसको मिटा देना चाहते थे, आज जान निछावर करने को तैयार थे और पूरी शक्ति लगाकर उसकी रक्षा कर रहे थे।

यह था वह व्यवहार जो हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने अपने ग़ैर-मुस्लिम दुश्मनों और अधीनस्थ नागरिकों के साथ किया। अब कोई बताये क्या विश्व-इतिहास में इतनी शानदार कोई दूसरी मिसाल मिलती है? कुछ छिटपुट घटनाओं को छोड़कर निरन्तर ऐसा व्यवहार कहीं नहीं पाया जाता। इसीलिये

आप (सल्ल०) को "रहमतुललिल आलमीन" (सारे जगत् के लिये रहमत) कहा जाता है। क़ुरआन ने आपको इसी उपाधि से विभूषित किया है।

अगाध मानव-प्रेम

आप (सल्ल०) के मिशन का एक अर्थ यह है कि सम्पूर्ण मानव-जाति को ज़ुल्म, अन्याय और आतंक से छुटकारा दिलाकर उसे न्याय, आत्म-सम्मान और शान्तिपूर्ण जीवन-प्रणाली की ओर बुलाया जाय, ताकि मनुष्य अपने पैदा होने के उद्देश्य को प्राप्त कर सके। यह काम तब तक नहीं हो सकता, जबतक कि वह आप (सल्ल०) की बतायी हुई शिक्षा के अनुसार ईश्वरीय आदेश का पालन करने के लिये तैयार न हो। आप (सल्ल०) का काम ही लोगों तक ईश्वर के आदेशों को खोल-खोल कर प्रस्तुत कर देना था, ताकि उसको समझने और उस पर चलने में कोई कठिनाई न हो। लेकिन यह बात ध्यान में रखने की है कि इसमें ज़ोर-ज़बरदस्ती से काम लेकर लोगों का विश्वास नहीं बदला जा सकता है, बल्कि उसके लिये प्रचार-प्रसार और शिक्षा को ही माध्यम बनाया गया। इतिहास साक्षी है कि आप (सल्ल०) ने पूरी निष्ठा के साथ इस काम को अंजाम दिया और आपके एक - एक अमल से आपका मानव-प्रेम साबित होता है। आप (सल्ल०) इस जाति और उस जाति के उत्थान के लिये नहीं उठे थे और न आप (सल्ल०) इस देश और उस देश की भलाई चाहते थे। आप (सल्ल०) के समक्ष पूरी मानवता थी और आप (सल्ल०) पूरी मानवता की भलाई चाहते थे। आप (सल्ल०) ने एक बार अपने मिशन के प्रति अपनी तत्परता स्पष्ट करते हुए कहा था--

> **"तुम्हारा हाल यह है कि जैसे किसी व्यक्ति ने आग जलाई हो और तुम पतिंगे की तरह उसमें दौड़ पड़ते हो और हमारा हाल यह है कि हम तुम्हारी कमर पकड़-पकड़ कर खींच रहे हैं कि कहीं तुम जल न मरो।"**

आप (सल्ल०) इस मामले में इतने भावुक थे कि आप रात-रात भर ख़ुदा के हुज़ूर नमाज़ में खड़े रहते और रो-रो कर लोगों को सीधी राह पर लाने की दुआ करते। दिन में हर छोटे-बड़े, अमीर-ग़रीब, औरत-मर्द, गुलाम-आज़ाद से

मिलते। उन तक अपनी बातें पहुंचाते। कोई आप (सल्ल०) की बात सुनता, कोई नहीं सुनता, कोई गाली देता, कोई मारता-पीटता, कोई अपमानित करता, लेकिन आपको एक धुन थी, एक लगन लगी हुई थी। आप (सल्ल०) लोगों से यही कहते--

> **"लोगो! मैं जो कुछ जानता हूँ, तुम नहीं जानते। मेरा कहा मानो, नहीं तो पछताओगे। आने वाला दिन बहुत ही भयानक और बड़ा ही कठिन है।"**

इस मामले में आपकी बेचैनी देखकर अल्लाह ने कहा, "अगर ये नहीं मानेंगे तो क्या आप अपने आपको हलाक कर लेंगे?" इस दावत का आह्वान अरब से भी है और ग़ैर-अरब से भी है, यहूदी भी इसके मुख़ातिब हैं और ईसाई भी, मूर्तिपूजक भी और नास्तिक भी। इस्लाम न क्षेत्र विशेष का धर्म है, न जाति विशेष का और न समय विशेष का। यह सम्पूर्ण मानव-जाति का धर्म है, क्योंकि इसका स्रष्टा वही है जिसने इस संसार को बनाया और उसी ने मुहम्मद (सल्ल०) को यह दीन (जीवन-व्यवस्था) देकर भेजा, ताकि आप इसको पूर्ण रूप से तमाम दूसरे विचारों और व्यवहारों पर स्थापित कर दें और इस आधार पर मानव-समाज की नई संरचना करें। इसी से लोक - परलोक में मानवता का कल्याण है। अगर इस्लाम संपूर्ण मानव-जाति का धर्म नहीं होता, तो इसे तमाम लोगों तक पहुंचाने का प्रयास क्यों किया जाता? चूंकि यह सम्पूर्ण मानव-जाति की सामूहिक सम्पत्ति है, इसलिये न्याय का तकाज़ा है कि जिनको अब तक इसका ज्ञान प्राप्त नहीं हो सका, उनको इसका ज्ञान प्रदान किया जाय और अपनी ओर से अपनी ज़िम्मेदारी अदा कर दी जाय, क्योंकि यह वह नाज़ुक मामला है जिसके बारे में ईश्वर के अन्तिम फ़ैसले में हर उस व्यक्ति से पूछा जायेगा जो कहता हो कि मैं मुसलमान हूँ और मेरे पड़ोस में ग़ैर मुस्लिम भाई रहते हैं।

एक शंका-समाधान

यहां तक यह प्रश्न उठ सकता है कि यदि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ऐसे ही क्षमा करने वाले और मानवता-प्रेमी थे और साथ ही क़ुरआन का स्पष्ट आदेश था कि धर्म के मामले में कोई ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं होगी, तो फिर जिहाद का अर्थ

क्या है और लड़ाइयाँ क्यों हुई ?

इस प्रश्न का सीधा उत्तर यह है कि यदि आपने ऊपर लिखी हुई बातों को ध्यान से पढ़ा होगा तो आप पर यह स्पष्ट हो गया होगा कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने पहले तलवार नहीं उठाई, बल्कि शान्ति पूर्ण ढंग से शत्रुओं का मुक़ाबला किया। जब हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) और आपके साथी मक्का से मदीना चले आये तो यहां भी मक्का वालों ने उन्हें चैन से नहीं बैठने दिया और बिना किसी उत्तेजना के मदीना पर चढ़ दौड़े। अब मुसलमानों के सामने अपनी और मदीना वालों की, जिनमें यहूदी और अन्य ग़ैर मुस्लिम भी थे, सुरक्षा की समस्या पैदा हुई। मुसलमानों ने भी, जो जंग करने की स्थिति में कदापि नहीं थे तथा अभी-अभी लूट-पिट कर आये थे और एक तरह से शरणार्थी के रूप में जीवन व्यतीत कर रहे थे, अपनी रक्षा करने पर मजबूर हो गये, क्योंकि क़ुरैश ने उनके घर के दरवाज़े पर पहुंच कर चुनौती दी थी। उसके बाद हर साल वे हमला करते रहे, यहां तक कि चौथे पांचवें साल वे सारे अरब को मुसलमानों के विरुद्ध जुटाकर ले आये। इस परिस्थिति को देखते हुए यहूदियों ने भी, जो मुसलमानों से यह संधि किये हुए थे कि वे मुसलमानों के ख़िलाफ़ किसी की सहायता नहीं करेंगे और दुश्मन का मिलजुल का मुक़ाबला करेंगे, पीठ में छुरा भोंक दिया। स्थिति इतनी गंभीर हो गई कि मुसलमानों को खाने के लिये एक दाना अनाज भी नहीं था। दुश्मन चारों ओर से घेरा डाले हुए थे। एक साहब से बर्दाश्त नहीं हुआ, तो वह आप (सल्ल०) के पास आये और अपना कुर्ता उठा कर दिखाया कि पेट पर भूख के मारे एक पत्थर बांध लिया है, तो आप (सल्ल०) ने अपना कुर्ता उठाकर दिखाया कि उनके पेट पर दो पत्थर बंधे हैं। परन्तु मुसलमानों ने परिस्थिति के सामने हथियार नहीं डाला और मोर्चे पर डटे रहे। अन्ततः अरब की संयुक्त शक्ति टूट गई और वे मैदान छोड़ कर भाग गये।

अतः मुसलमानों के सामने स्पष्ट होकर यह बात आ गई कि इस शक्ति को यदि हमेशा के लिये तोड़ नहीं दिया गया, तो जब कभी उनके पास थोड़ी शक्ति जमा हो जायेगी, वे पुनः हमला करेंगे। इसलिये इसके बाद जंग का रुख़ प्रतिरक्षात्मक (Defensive) नहीं रह सका। मैं नहीं समझता कि इस पर किसी

व्यक्ति को कोई आपत्ति हो सकती है।

दूसरी बात यह है कि यह लड़ाई केवल उन शक्तियों से थी, जो इस्लाम-विरोधी थीं तथा जिन्होंने अन्याय और आतंक का राज्य स्थापित कर रखा था। इस्लाम जिस समय अन्तर्राष्ट्रीय शक्ति के रूप में उभर रहा था उस समय सारी दुनिया पर वंशगत राजा राज कर रहे थे। मानवता उनके ज़ुल्म के चंगुल में फंसी हुई थी। उसको दम मारने की भी अनुमति नहीं थी। आज़ाद ग़ुलाम बनाये जा रहे थे। औरतें बाज़ार का माल बनी हुई थीं। बच्चे अनाथ किये जा रहे थे। किसानों और मज़दूरों से उनकी क्षमता से ज़्यादा काम लिया जाता था और उन पर भारी कर लगाये जाते थे। धार्मिक स्थानों को अपवित्र किया जाता जाता था और मानव-ख़ून से सस्ती कोई चीज़ नहीं थी। राजा किसी नीति-विधान का पाबन्द नहीं था। उसके शब्द क़ानून थे। मानवता त्राहि-त्राहि कर रही थी। इस्लाम, जो मानवता का संवाहक और उसकी प्रतिष्ठा का प्रतीक था, की यह नैतिक ज़िम्मेदारी थी कि मानवता को अन्याय और अत्याचार के इस चंगुल से निकाले, जिसके लिये इन राज-शक्तियों से लड़ाई अनिवार्य थी और इस्लाम ने यह लड़ाई लड़ी और मानवता को मुक्ति प्रदान की। इस्लाम ने केवल अपनी प्रतिरक्षा के लिये ही नहीं, बल्कि अन्याय और अत्याचार को समाप्त करने के लिये संघर्ष किया है।

क़ुरआन के इन उद्धरणों को ग़ौर से देखिये। फिर निर्णय लीजिए, क्या ऐसा करना अनिवार्य नहीं था? क्या ऐसा करना अत्याचार था?

> **"जिन मुसलमानों से जंग किया गया उनको जंग की इजाज़त दी गई, क्योंकि वे मज़लूम (सताये हुये) थे और ईश्वर उनकी मदद की पूर्ण शक्ति रखता है। ये वे लोग हैं, जो अपने घरों से अकारण निकाले गये हैं, केवल इसलिये कि उन्होंने ईश्वर को अपना पालनहार मान लिया है। अगर ईश्वर यह अनुमति देकर कुछ लोगों के द्वारा कुछ को हटाने का प्रबन्ध नहीं करता तो ईसाइयों के गिरजे, यहूदियों का धर्मस्थान, पारसियों के मंदिर और मुसलमानों की मस्जिदें (जहां ईश्वर का बहुत नाम लिया जाता है) ज़रूर ध्वस्त कर दी जातीं।"**

एक दूसरी आयत में क़ुरआन ने जंग का आदेश देते हुए कहा है—

"ईश्वर की राह में कमज़ोर मर्दों और औरतों और बच्चों के बचाव के लिये तुम जंग क्यों नहीं करते, जो दुआएं कर रहे हैं कि हे ईश्वर ! हमको इस बस्ती से निकाल, यहां के लोग बड़े ज़ालिम हैं।" —४ : ७५

इन दोनों आयतों को ग़ौर से देखिए। इनमें पहली बात तो यह कही गई है कि जिसने तुम पर हमला किया है, तुम कमज़ोर हो तो क्या हुआ उनसे जंग करो ईश्वर तुम्हारे साथ है। यदि ऐसा नहीं करोगे तो ये ज़ालिम लोग हर धर्मावलंबी और धर्मस्थल को अपमानित करेंगे और अपनी बड़ाई के घमंड में उसको तोड़-फोड़ कर रख देंगे। अतः एक धर्म की रक्षा नहीं, सभी धर्मों की रक्षा के लिये ऐसी शक्तियों से लड़ना अनिवार्य है। दूसरी आयत में निःसहाय की सहायता के लिये बलवानों से लड़ने का आह्वान किया गया है। यही इस्लामी जिहाद का मूल आशय है।

एक और प्रश्न

यहां पर एक और प्रश्न उठ सकता है कि यदि इस्लामी जिहाद का यही उद्देश्य है, तो भारत में मुसलमानों के आक्रमण का क्या औचित्य था? जबकि यहां उन्होंने वंशगत राजतंत्र की ही स्थापना की, फिर उन्होंने न तो न्याय का कोई अच्छा नमूना पेश किया और न कोई अच्छा चरित्र।

इस सवाल का एक उत्तर तो यह है कि भारत पर कभी इस्लाम ने हमला ही नहीं किया, बल्कि भारत पर मुसलमानों ने हमला किया और ऐसे मुसलमानों ने हमला किया जो इस्लाम से बहुत दूर का संबंध रखते थे। जो मुसलमान तो थे, लेकिन इस्लामी शिक्षा और इस्लामी परंपरा में परिपक्व नहीं थे। यही कारण है कि उन्होंने मुसलमान होने के बावजूद इस देश में इस्लाम के प्रचार-प्रसार में कोई दिलचस्पी नहीं ली, बल्कि अपने आचरण से उसे हर संभव तरीक़े से मिटाने का ही प्रयास किया। यह बात सच है कि धर्म न ख़रीदा जा सकता है, न दबाव डाल कर बदला जा सकता है। यह बाज़ार में बिकने वाली चीज़ नहीं है। इसका संबंध मनुष्य के अन्तःकरण से होता है। हां, सत्य का सन्देश देना मनुष्य का कर्तव्य है।

सत्य-सन्देश (इस्लाम) को मानव-हृदय में उतारा जाना चाहिए। ईमान लाने का यह तक़ाज़ा है कि हृदय-परिवर्तन हो और हृदय-परिवर्तन के लिये शक्ति और धन नहीं सच्चाई, न्यायपूर्ण व्यवहार, नैतिकता और आचरण का स्वच्छ होना ज़रूरी है। इस्लाम के फैलने और बढ़ने का रहस्य यह भी है। जो लोग अपनी कमज़ोरियां छुपाना चाहते हैं, वे इस्लाम पर तरह-तरह के झूठे आरोप लगाकर लोगों को गुमराह करते हैं। आप जानते होंगे कि आरंभिक काल में आप (सल्ल०) के साथियों के नेतृत्व में जहां भी इस्लामी सेना भेजी गयी, स्थानीय आबादी ने उनका आगे बढ़कर स्वागत किया और मुसलमानों को अपने शासकों से अधिक उदार और अपने हितों की रक्षा करने वाला समझा। उनके दिलों के बंद दरवाज़े खुल गये और वे सबके सब स्वेच्छा से इस्लाम में दाख़िल हो गये। जहां-जहां इस्लामी आदर्शों से पूर्णरूपेण अवगत अरबी सेना गई, वहाँ शत-प्रतिशत आबादी ने इस्लाम क़ुबूल कर लिया, बल्कि जहां कोई सेना नहीं गई, जैसे इण्डोनेशिया, मलेशिया, केवल अरबी व्यापारी उन क्षेत्रों में गये, वहां भी शत-प्रतिशत लोगों ने इस्लाम बिना किसी लड़ाई के क़ुबूल किया। भारत में तुर्की, मंगोल और अफ़ग़ानी लोग इस्लाम के प्रतिनिधि बन कर आये, लेकिन इनका इस्लाम अधूरा था, इसलिये इन्होंने स्वस्थ इस्लामी परम्परा को रिवाज देने में कोताही बरती और यदा-कदा अन्याय तथा अत्याचार से भी काम लिया। परन्तु एक बात अवश्य कही जायेगी कि इस्लामी प्रभावों के फलस्वरूप उनकी शासन-व्यवस्था समकालीन शासन-व्यवस्था से निश्चय ही श्रेष्ठ थी और साधारण जनता को कोई तकलीफ़ नहीं थी। अतः इस्लाम का भारतीय समाज पर जो भी प्रभाव पड़ा, तत्कालीन सामाजिक दृष्टिकोण से अति उत्तम था और आज भी यह हमारी बहुमूल्य परंपराओं में सम्मिलित है।

षष्ठम अध्याय

हदीस माला

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने अपने २३ वर्षीय पैग़म्बर-काल में समय-समय पर जो शिक्षाएं और उपदेश दिये हैं, उनके दो भाग हैं— क़ुरआन और हदीस।

क़ुरआन— यह अक्षरशः ईश्वर की ओर से अवतरित हुआ है। अतः यह ईश्वरीय वाणी है, जो मुहम्मद (सल्ल०) पर उतरी और जिसको आप (सल्ल०) ने अक्षरशः पूरे का पूरा बिना अपना एक शब्द जोड़े लोगों के सामने प्रस्तुत कर दिया। इसीलिये क़ुरआन को अल्लाह की किताब कहा जाता है और क़ुरआन ने स्वयं यह स्पष्ट कर दिया है कि 'यह अल्लाह कृपाशील की ओर से अवतरित पुस्तक है।' जो लोग क़ुरआन को ईश्वर की नहीं, बल्कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की कृति मानते या कहते हैं वे एक ऐसी बात कहते हैं जिसकी उनके पास कोई दलील नहीं है। आख़िर एक व्यक्ति क़ुरआन जैसी अनुपम किताब प्रस्तुत करता है जिसका प्रभाव आज चौदह सौ वर्ष बीतने के बाद भी वैसा ही है, जैसा प्रभाव उसके अवतरण काल में था। और यह दुनिया में सबसे ज़्यादा मान्य, पवित्र और पढ़ी जाने वाली किताब है।

इस समय मेरे समक्ष क़ुरआन का परिचय प्रस्तुत करना अभीष्ट नहीं है, बल्कि केवल यह बताना है कि इस्लामी शिक्षाओं के दो मौलिक स्रोत हैं— एक ईश्वर की किताब अर्थात् क़ुरआन, दूसरे हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के अनमोल वचन अर्थात् हदीसें। इन दोनों के समायोजन से ही इस्लामी शिक्षा पूर्ण होती है।

हदीस का शाब्दिक अर्थ बात करना है। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की कही हुई बात को हदीस कहते हैं। हदीस की परिभाषा यह है— "हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के कथन और कार्य हदीस हैं तथा जिस काम को आपने देखा और पसन्द किया, जिस काम को आपने देखा और मना नहीं किया उसको भी हदीस कहते हैं।" हदीस क़ुरआन से बिल्कुल अलग एक चीज़ है। यह एक अर्थ में क़ुरआन की व्याख्या है। जो लोग अरबी जानते हैं, वे आसानी से समझ सकते हैं कि हदीस की भाषा और शैली क़ुरआन की भाषा और शैली से बिल्कुल भिन्न

है। अगर ये दोनों चीज़ें एक ही आदमी की कृति होतीं तो दोनों में इतना अन्तर कैसे होता? यह भी एक प्रमाण है कि हदीसें अलग हैं और क़ुरआन अलग। यद्यपि दोनों का स्रोत एक ही है। इसलिये एक मुसलमान के लिये क़ुरआन के साथ-साथ हदीस को मानना और उस पर चलना अनिवार्य है।

हदीसों की संख्या बहुत है और वे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में हमारा मार्ग-दर्शन करती हैं। यहां उसकी कुछ झलक दिखाने का प्रयास किया जा रहा है, ताकि आपको अनुभव हो सके कि इसमें जीवनोपयोगी कैसे-कैसे बहुमूल्य मोती हैं, जिनका अगर अनुसरण किया जाय तो मानव-समाज स्वर्ग बन सकता है। मैं कोशिश करूंगा कि जीवन के विभिन्न पक्षों से संबंधित आप (सल्ल०) की शिक्षाओं की एक झलक आपके सामने प्रस्तुत करूं—

ईश्वर का परिचय

१. हज़रत अबू हुरैरह (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा— "लोग हमेशा एक-दूसरे से प्रश्न करते रहेंगे, यहां तक कहा जायेगा कि सम्पूर्ण जगत् को तो अल्लाह ने पैदा किया, अच्छा तो अल्लाह को किसने पैदा किया? जब लोग इस तरह बातें करने लगें तो कहो—अल्लाह यकता है, अल्लाह निस्पृह है और सभी का केन्द्र-बिन्दु है। उसकी कोई सन्तान नहीं और न वह किसी की सन्तान है और कोई नहीं जो उसके बराबर हो।" (अबू दाउद)

२. अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा— "अल्लाह कहता है—आदम की सन्तान ने मुझे झुठलाया—हालांकि उसे ऐसा नहीं करना चाहिए था और उसने मुझे गाली दी, हालांकि उसे यह बात न कहनी चाहिये थी। उसका मुझे झुठलाना यह है कि वह कहता है कि जिस तरह अल्लाह ने मुझे पहली बार पैदा किया है वह मरने के बाद दोबारा कदापि नहीं ज़िन्दा करेगा, जबकि मेरे लिये पहली बार पैदा करना उसके दोबारा पैदा करने की अपेक्षा आसान तो नहीं था और उसका मुझे गाली देना यह है कि वह कहता है कि अल्लाह ने अपना बेटा बनाया, जबकि मैं

यकता, निस्पृह और सभी का केन्द्र-बिन्दु हूँ। न मैं किसी का बाप हूँ और न कोई मेरा हमसर है।"

ईश्वर एक है और किसी रूप में उसके गुणों और अधिकारों में कोई उसका साझी नहीं है। इसी को तौहीद (एकेश्वरवाद) कहते हैं। यही सबसे बड़ी सच्चाई है। बहुदेववाद (शिर्क) इस्लाम की नज़र में सबसे बड़ा पाप और सबसे बड़ा ज़ुल्म है। एक ऐसे समाज में, जहां ईश्वरीय अस्तित्व और अधिकार सुरक्षित और सुदृढ़ नहीं रहते, वहाँ किसी व्यक्ति, जाति और वर्ग के अधिकार कैसे सुरक्षित रह सकते हैं? इस्लाम में तौहीद ईश्वरीय सत्ता और मानवीय समता तथा मुक्ति का परिचायक है।

३. हज़रत अबूज़र गफ़्फ़ारी (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा कि सर्वशक्तिमान अल्लाह कहता है, जो व्यक्ति एक नेकी करेगा, उसे उसका दस गुना बदला मिलेगा और मैं उसे और अधिक दूंगा और जो बुराई करेगा उसे केवल एक बुराई का बदला मिलेगा या क्षमा कर दूंगा। जो मुझसे एक बालिश्त निकट होगा, मैं उससे एक हाथ निकट हूँगा और जो मुझसे एक हाथ निकट होगा, मैं उससे दो हाथ निकट हूँगा और जो मेरी ओर चलकर आयेगा, मैं उसकी ओर लपकता हुआ आऊंगा और जो मुझसे ज़मीन के बराबर गुनाह (पाप) करके मिलेगा, मैं उससे उसी जैसी क्षमा लेकर मिलूंगा शर्त यह है कि उसने किसी को मेरा साझी न माना हो।

४. हज़रत अबूज़र (रज़ि०) से रिवायत है कि आपने कहा कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा कि अल्लाह कहता है– "हे मेरे बन्दो! मैंने अपने ऊपर ज़ुल्म को हराम कर लिया है और उसे तुम्हारे बीच भी हराम किया है, तो एक-दूसरे पर ज़ुल्म न किया करो। हे मेरे बन्दो! तुम सब राह से भटके हुए हो सिवाय उसके जिसे मैंने राह दिखाई, तो मुझसे मार्ग-दर्शन चाहो, मैं तुम्हें राह दिखाऊंगा। हे मेरे बन्दो! तुम सब भूखे हो सिवाय उसके जिसे मैं खिलाऊंगा, तो मुझसे खाना-

मांगो, मैं तुम्हें खिलाऊंगा। हे मेरे बन्दो! तुम सब नंगे हो उसके सिवा जिसे मैंने वस्त्र पहनाया, तो मुझसे वस्त्र मांगों, मैं तुम्हें पहनाऊंगा। हे मेरे बन्दो! तुम रात-दिन ग़लतियां करते हो, मैं सब गुनाहों को माफ़ करता हूँ तो तुम मुझसे माफ़ी मांगो। मैं तुम्हें माफ़ी दूंगा। हे मेरे बन्दो! तुम कदापि मुझे नुक़सान पहुंचाने की स्थिति में नहीं हो सकते कि मुझे नुक़सान पहुंचाओ और तुम कदापि मुझे लाभ पहुंचाने की स्थिति में नहीं हो सकते कि मुझे लाभ पहुंचाओ। हे मेरे बन्दो! अगर तुम्हारे अगले और पिछले और तुम्हारे सारे मनुष्य और 'जिन' तुम में सबसे बढ़कर अल्लाह से डरने वाले व्यक्ति की तरह हो जायें तो यह बात मेरी बादशाही में कुछ बढ़ा नहीं सकती। हे मेरे बन्दो! अगर तुम्हारे अगले और पिछले और सारे मनुष्य और जिन तुम में सबसे बढ़कर दुराचारी और मर्यादाहीन व्यक्ति की तरह हो जायें तो यह चीज़ मेरी बादशाही में कोई कमी पैदा नहीं कर सकती। हे मेरे बन्दो! अगर तुम्हारे अगले और पिछले तुम्हारे मनुष्य तथा जिन सब एक मैदान में खड़े हों और मुझसे दुआ मांगें और मैं हर व्यक्ति की मांग पूरी करूं तो इससे जो मेरे पास है, उसमें कोई कमी न होगी, किन्तु बस उतनी जितनी समुद्र में सूई डाल कर निकाल लेने से समुद्र के पानी में कमी होती है। हे मेरे बन्दो! ये तो तुम्हारे ही कर्म हैं, जिन्हें मैं तुम्हारे लिये गिन करके रखता हूँ। फिर मैं तुम्हें उनको पूरा-पूरा दूंगा। अतः जो व्यक्ति अच्छा बदला पाये, तो उसे अल्लाह की प्रशंसा करनी चाहिये और जो इसके विपरीत (यानी बुरा बदला) पाये तो वह केवल अपने आपको मलामत करे।

रसूल का परिचय

अल्लाह ने अपने धर्म को अपने रसूलों के द्वारा भेजा। ये नबी और रसूल हर समय, हर काल, हर जाति तथा हर देश में आये। उन्होंने हर भाषा और हर क्षेत्र में

अपना सन्देश पहुंचाया। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) उसी सिलसिले की अन्तिम कड़ी हैं। आप (सल्ल०) पर यह सिलसिला पूर्ण तथा समाप्त हो गया। आप (सल्ल०) ने अपने विभिन्न उपदेशों में अपना परिचय इस प्रकार कराया है–

(१) हज़रत इब्ने उमर (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल ने कहा– "मेरी शान में अतिशयोक्ति न करो, जैसा कि ईसाइयों ने ईसा मसीह की शान में किया। मैं तो बस अल्लाह का बन्दा और उसका एक रसूल हूँ। अत: मुझे अल्लाह का बन्दा और उसका रसूल कहो।" (बुख़ारी, मुस्लिम)

(२) हज़रत उम्मे सलमा (रज़ि०) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा–

"मैं एक मनुष्य ही हूँ। तुम लोग अपने झगड़े लेकर मेरे पास आते हो। हो सकता है कि तुममें से कोई अपने पक्ष को पेश करने में दूसरे से बढ़कर हो और मैं जैसा उससे सुनूं उसके अनुसार उसके हक़ में फ़ैसला कर दूं, तो अगर मैं किसी के भाई के अधिकार का फ़ैसला उसके हक़ में कर दूं तो वह उसे कदापि न ले, क्योंकि जो कुछ उस फ़ैसले से उसे मिला है वह उसके लिये आग का अंगारा है।" (बुखारी, मुस्लिम)

(३) हज़रत जाबिर बिन अब्दुल्लाह से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा– "पहले नबी ख़ास अपनी क़ौम की ओर भेजे जाते थे–और मैं सारे ही इंसानों की ओर भेजा गया हूँ।" (बुख़ारी, मुस्लिम)

एक दूसरी रिवायत में है– "मैं काले और गोरे सब की ओर भेजा गया हूँ।" (मुस्नद अहमद)

(४) आपने कहा– "मैं उनका भी रसूल हूं, जो इस समय ज़िन्दा हैं और उनका भी जो मेरे बाद पैदा होंगे।" (इब्न साद)

(५) आप (सल्ल०) ने कहा– "उसे एक बार मुबारकबाद जिसने मुझे देखा

और मुझ पर ईमान लाया और उसे सात बार मुबारकबाद जिसने मुझे नहीं देखा और मुझ पर ईमान लाया।" (अहमद)

(६) आप (सल्ल०) ने कहा– "तुम में से कोई व्यक्ति उस समय तक मोमिन (ईश्वर का विश्वासी और आज्ञाकारी) नहीं होगा, जब तक कि उसकी इच्छा उस शरीअत के अधीन न हो जाये, जिसे मैं लेकर आया हूँ।" (शरहु- सुन्नह)

(७) आप (सल्ल०) ने कहा– "मेरी उम्मत में तीस झूठे लोग होंगे, उनमें से हर एक अपने नबी होने का दावा करेगा, जबकि मैं सबसे अन्तिम नबी हूँ। मेरे बाद कोई नबी नहीं।" (मुस्लिम)

अत: आप ही क़ियामत तक के लिये ईश्वर की ओर से उसके पैग़म्बर हैं। यदि कोई आप (सल्ल०) को छोड़कर अन्य किसी भी व्यक्ति की पैरवी करता है, तो वह ईश्वर की भक्ति नहीं करता, बल्कि मनचाहे रास्ते पर चलता है। अत: वह ईश्वर के क्रोध और दण्ड का पात्र होगा। लोगों को इस तथ्य से सावधान रहना चाहिये।

क़ियामत का परिचय

दुनिया एक रास्ता है, मंज़िल परलोक (आख़िरत) है। जिस तरह यह भौतिक शरीर विनाशी है, उसी तरह यह भौतिक संसार भी समाप्त हो जायेगा। इसी घड़ी को इस्लामी धर्म-विधान में क़ियामत कहते हैं। क़ियामत की चर्चा दुनिया के सभी धर्म-ग्रन्थों में किसी-न-किसी रूप में मिलती है। इस्लामी धर्म-ग्रन्थों (क़ुरआन और हदीस) में इसके विषय में स्पष्ट और प्रामाणिक जानकारी मिलती है।

(१) हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा– "जो व्यक्ति क़ियामत के दिन को आंखों से देखना चाहता है तो उसे सूरह तकवीर, सुरह इनफ़ितार और सूरह इनशिक़ाक़ पढ़नी चाहिये।"

इन सूरतों का सारांश यह है कि क़ियामत के दिन सूरज प्रकाशहीन हो जायेगा; आसमान फट जायेगा; सितारे टूट-टूट कर गिरने लगेंगे; पहाड़ धुनी

हुई रूई के गोले की तरह उड़ने लगेंगे; ज़मीन फट पड़ेगी; सब दरियाओं का पानी बह निकलेगा और समुद्रों में आग लग जायेगी; लोग अपनी बहुमूल्य वस्तुओं को छोड़ कर भाग कर खड़े होंगे। जंगली जानवर मारे डर के जमा हो जायेंगे। लोग अपनी-अपनी क़ब्रों से निकल खड़े होंगे और जब सब लोग इकट्ठे किये जायेंगे, उस समय उनके कर्मपत्र उनके सामने प्रस्तुत किये जायेंगे। अल्लाह उस दिन लोगों के सामने प्रकट होगा और खुली अदालत में लोगों के कर्मों का हिसाब-किताब होगा। अगर किसी ने राई बराबर भी नेकी की होगी तो वह उसको वहाँ देख लेगा और राई के बराबर बुराई की होगी तो उसको भी देख लेगा। इस प्रकार सम्पूर्ण जीवन के क्रिया-कलापों के आधार पर उसके द्वारा किये गये कार्यों के पूर्ण प्रभावों के संदर्भ में उसको सज़ा या जज़ा (अच्छा बदला) मिलेगा। इस मामले में स्त्री-पुरुष के बीच कोई अन्तर नहीं है। सभी अपने-अपने कर्म के स्वतंत्र रूप से ज़िम्मेदार हैं। कोई उस दिन अपनी जाति, समाज या सरदार का नाम लेकर या उनको दोषी ठहराकर अपने आपको मुक्त नहीं करा सकता, क्योंकि ईश्वर ने प्रत्येक मनुष्य को स्वतंत्र पैदा किया है। अतः वह व्यक्तिगत आधार पर स्वतंत्र रूप में ही उनसे पूछताछ करेगा। रहे वे लोग जिन्होंने समाज को ग़लत रास्ते पर चलाने का प्रयत्न किया तो उनको दोहरी सज़ा दी जायेगी—एक अपनी ग़लती और दूसरे अन्य लोगों को ग़लत रास्ते पर चलाने की। उस दिन सारे निर्दोष, निःसहाय और मासूम लोगों की सुनवाई होगी। वह लड़की जिसको पैदा होते ही ज़िन्दा गाड़ दिया गया; वह महिला जिसको दहेज न लाने के आरोप में ज़िन्दा जला दिया गया; वह विधवा जिसको पति की चिता पर ज़िन्दा जलने के लिये मजबूर किया गया; उन सब को उस दिन न्याय मिलेगा।

क़ियामत कब आयेगा? जब यह प्रश्न अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से पूछा गया, तो आपने जवाब दिया कि इसकी जानकारी केवल अल्लाह को है। परन्तु आप (सल्ल०) ने विभिन्न प्रश्नों के जवाब में उसके कुछ लक्षण अवश्य बताये हैं, जिनसे अनुमान होता है कि हम लोग तेज़ी से उस ओर दौड़ते चले जा रहे हैं।

(२) आप (सल्ल०) ने उसके लक्षण का उल्लेख करते हुये कहा— "जब लौंडी अपनी मालकिन को जनेगी (अर्थात् मां दासी और बेटी

मालकिन जैसा व्यवहार करने लगेगी) और तुम नग्न शरीर और नग्न पांव (सभ्यता संस्कृति से अनभिज्ञ) और बकरियां चराने वाले लोगों को देखोगे कि वे अपने-अपने इमारतों के निर्माण में आपस में होड़ लगाए हुए हैं।" (मुस्लिम)

एक दूसरी हदीस में आप (सल्ल०) ने कहा— "जब सरकार की शक्ति और कार्य-सम्पादन का अधिकार अयोग्य लोगों को सौंपा जाने लगे, तो क़ियामत का इन्तज़ार करो अर्थात् समझ लो कि क़ियामत दूर नहीं।"

(३) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा— "जब इल्म (धर्म-ज्ञान) उठा लिया जायेगा। जिहालत (अज्ञानता) बढ़ जायेगी। व्यभिचार का बाहुल्य होगा। शराब बहुत पी जाने लगेगी। मर्द कम औरतें ज़्यादा हो जायेंगी, यहां तक की पंचास औरतों की देख-रेख के लिये केवल एक मर्द होगा।" (बुख़ारी, मुस्लिम)

(४) एक बद्दू को जवाब देते हुये आप (सल्ल०) ने कहा— "जब अमानत नष्ट हो जाये तो क़ियामत का इन्तज़ार करो।" उसने पूछा— "वह कैसे नष्ट होगी?" आपने कहा— "जब मामले अयोग्य लोगों के हाथ में दे दिये जायें तो क़ियामत का इंतज़ार करो।" (बुख़ारी)

(५) हज़रत अबू हुरैरह (रज़ि०) कहते हैं कि आप (सल्ल०) ने कहा— "जब युद्ध-अवशेष को दौलत समझ लिया जाये और अमानत को लूट का माल माना जाने लगे और ज़कात जुर्माना समझा जाय और इल्म (शिक्षा) को दीन (धर्म) के सिवा किसी दूसरी चीज़ों की प्राप्ति के लिये सीखा जाये तथा मर्द स्त्री का आज्ञापालन करने लगे और अपनी मां की अवज्ञा करे और उसे कष्ट दे, वह अपने दोस्तों को समीप रखे और अपने बाप को दूर कर दे। मस्जिदों में ज़ोर-ज़ोर से बात की जाने लगे और क़बीले की सरदारी क़बीले का अत्यन्त बुरा आदमी करे और

क़ौम का नेता क़ौम का घटिया और कमीना व्यक्ति हो और लोग उसकी इज़्ज़त उसके अत्याचार से बचने के लिये करें, गाने वाली औरतें और बाजे फैल जायें, शराबें पी जाने लगें और इस उम्मत के पिछले लोग अगले लोगों को बुरा-भला कहने लगें तो उस समय इन्तज़ार करो—लाल आंधी, भूकम्प, ज़मीन के धंसने, चेहरों के बिगड़ जाने, पत्थरों के बसरने का।"

अगर आंखें खोलकर देखें तो आपको क़दम-क़दम पर ये लक्षण आज दिखाई देंगे।

(६) क़ियामत में किन बातों की पूछताछ होगी—हज़रत इब्ने मसऊद (रज़ि०) कहते हैं कि रसूलल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया है— "इब्ने आदम (मनुष्य) के क़दम अपनी जगह से उस समय तक नहीं हट सकेंगे, जब तक पांच बातों के बारे में उससे प्रश्न न कर लिया जाये। उसकी उम्र (आयु) के बारे में कि उसने उसे किन कामों में बितायी। उसकी जवानी के बारे में कि उसने उसे कहां व्यतीत किया। उसके माल के बारे में कि उसने उसे कहां से कमाया और कहां ख़र्च किया और जो ज्ञान प्राप्त किया उस पर कहां तक अमल किया। (अर्थात् कहां तक उस पर चले।)"

(७) बुद्धिमान वह व्यक्ति है, जो अपने मन को नियंत्रण में रखे और मरने के बाद के लिये अमल करे और विवेकहीन वह है, जो अपने मन की इच्छा की पैरवी करे और अल्लाह से ग़लत उम्मीदें बांध कर रखे।

(८) पूछा गया कि लोगों में अच्छा कौन है? आप (सल्ल०) ने बताया कि वह जो दीर्घ आयु हो और अच्छा आचरण करता हो। फिर पूछा गया कि बुरा कौन है? आपने बताया कि वह जो दीर्घ आयु हो और बुरा आचरण करता हो।

(९) दुनिया के प्रति मोमिन का व्यवहार— "तुम दुनिया में इस प्रकार रहो

मानो तुम परदेशी हो या राह चलते मुसाफ़िर।"

जो लोग हर जायज़ और नाजायज़ तरीक़े से दुनिया कमाते हैं, वे मानो दुनिया में रहने वाले लोगों के लिये दुनिया को नर्क बना देते हैं। परन्तु वे स्वयं इस नर्क से सुरक्षित नहीं रह सकते, बल्कि उन्हें अपने इस जन्म के कुकर्मों के बदले सदा के लिये परलोक में जहन्नम की आग में जलना होगा।

इस्लाम का परिचय

(१) अल्लाह के रसूल (सल्ल) ने कहा— "इस्लाम की बुनियाद पांच चीज़ों पर रखी गयी है—इस बात की गवाही देना कि अल्लाह के सिवा कोई इलाह (पूज्य) नहीं और यह कि मुहम्मद (सल्ल०) अल्लाह के बन्दे और उसके रसूल हैं और नमाज़ क़ायम करना और ज़कात देना और हज करना और रमज़ान के रोज़े रखना।"

स्पष्ट रहे कि ये इस्लाम के मूल आधार हैं, जिनको माने बिना कोई व्यक्ति मुसलमान नहीं हो सकता। यहाँ यह स्पष्ट रहे कि यह केवल नींव है, पूरा भवन नहीं अर्थात् यह मुसलमान होने के लिये कम-से-कम शर्त है।

(२) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा— "ईमान के बहुत-से अंग हैं। उसकी जड़ यह है कि तुम ईश्वर के सिवा किसी की इबात न करो और उसकी मामूली शाख यह है कि रास्ते में तुम अगर कोई ऐसी चीज़ देखो, जो लोगों को तकलीफ़ देने वाली हो तो उसे हटा दो। लज्जा भी ईमान का एक अंश है।"

(३) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा— "वस्त्र और शरीर की पाकी और स्वच्छता आधा ईमान है।"

(४) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा— "उस व्यक्ति में ईमान नहीं, जिसमें अमानतदारी नहीं और वह व्यक्ति अधर्मी है, जो वादे का पाबन्द नहीं।"

(५) आप (सल्ल०) ने कहा— "ईमान संयम और उदारता का नाम है।"

(६) आप (सल्ल०) ने कहा— **"जब नेकी करके तुम्हें ख़ुशी हो और बुराई करके तुम्हें पछतावा हो तो समझो कि तुम मोमिन हो।"**

(७) आप (सल्ल०) ने कहा— "ईमान की बेहतरीन स्थिति यह है कि तेरी दोस्ती और दुश्मनी केवल ईश्वर ही के लिये हो, तेरी ज़ुबान पर ईश्वर का नाम जारी हो और दूसरों के लिये तू वही कुछ पसंद करे जो अपने लिये पसंद करता है और उनके लिये वही कुछ नापसंद करे जो अपने लिये नापसंद करता है।"

मोमिन का परिचय

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा—

(१) "मोमिन वह है, जिससे लोगों को अपनी जान और माल का कोई ख़तरा न हो।"

(२) "तुममें सबसे उच्च कोटि का ईमान उस व्यक्ति का है, जिसका आचरण सबसे अच्छा हो और जो अपने घर वालों के लिये सबसे ज़्यादा मेहरबान हो।"

(३) "जो व्यक्ति ईश्वर और आख़िरत पर ईमान रखता है, उसे अपने अतिथियों का सत्कार करना चाहिये और अपने पड़ोसी को तकलीफ़ नहीं देनी चाहिये और उसकी ज़ुबान खुले तो भली बात के लिये अन्यथा चुप रहे।"

(४) "मोमिन कभी ताना देने वाला, लानत करने वाला, गाली बकने वाला और डींग हांकने वाला नहीं हुआ करता।"

(५) "मोमिन सब कुछ हो सकता है, मगर झूठा और बेईमान नहीं हो सकता।"

(६) **"ख़ुदा की क़सम! वह व्यक्ति मोमिन नहीं है, जिसकी बुराई से उसका पड़ोसी अमन में नहीं।"**

(७) "जो व्यक्ति स्वयं भर पेट खाये और उसके समीप उसका पड़ोसी भूखा रह जाय (एक दूसरी हदीस में है जिसकी जानकारी उसको हो), तो वह ईमान नहीं रखता।"

(८) "जो व्यक्ति क्रोध निकालने की शक्ति रखता हो, फिर संयम बरते उसके दिल को अल्लाह शान्ति और ईमान से भर देता है।"

(९) "जो व्यक्ति किसी ज़ालिम को ज़ालिम जानते हुए उसका साथ दे, वह ईमान से निकल गया।"

(१०) "अपने भाई की मदद करो, चाहे वह ज़ालिम हो या मज़लूम।" सहाबा ने पूछा— "ज़ालिम की मदद का क्या अर्थ है?" आप (सल्ल०) ने कहा— "ज़ुल्म से उसका हाथ रोक लो। यही उसकी मदद है।"

(११) "अगर तुम किसी बुराई को देखो और तुम्हारे पास शक्ति हो तो अपने हाथ से बदल दो, अगर हाथ से बदलने की शक्ति न हो तो उसको ज़ुबान से बुरा कहो। अगर यह भी न कर सको तो बुराई से दूर रहो और अगर कोई व्यक्ति चुप रहता है और बुराई से दूर भी नहीं रहता तो उसके दिल में रत्ती बराबर भी ईमान नहीं है।"

मुनाफ़िक़ का परिचय

(१) "पक्का मुनाफ़िक़ (मिथ्याचारी) वह व्यक्ति है, जो अमानत में ख़ियानत करे, बोले तो झूठ बोले, वादा करे तो पूरा न करे और किसी से लड़ाई हो जाये तो गाली-गलौज पर उतरे आये।"

(२) "जिसने लोगों को दिखाने के लिये नमाज़ पढ़ी या रोज़ा रखा या ख़ैरात (दान) किया, उसने ईश्वर की ज़ात में लोगों को साझी बनाया।"

मानवता की शिक्षा

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा—

(१) "लोगो ! तुम्हारा रब एक है, तुम्हारा बाप एक है; तुम सब आदम की औलाद हो और आदम मिट्टी से बने थे। तुममें अल्लाह के नज़दीक श्रेष्ठ वह है, जो अल्लाह से डर कर जीवन व्यतीत करने वाला है। किसी अरबी को ग़ैर अरबी पर और किसी ग़ैर अरबी को अरबी पर कोई श्रेष्ठता प्राप्त नहीं और किसी गोरे को काले पर तथा किसी काले को गोरे पर कोई श्रेष्ठता प्राप्त नहीं सिवाय ईश्वर से डर के।"

इस्लामी समाज में वह आदमी श्रेष्ठ माना जाता है, जो ईश्वर से डरता है और उसका आज्ञाकारी है। यही श्रेष्ठता का आधार है।

(२) "मैं गवाही देता हूं कि सारे मनुष्य आपस में भाई-भाई हैं।"

(३) "सारे प्राणी अल्लाह का परिवार है तो प्राणियों में सबसे ज़्यादा अल्लाह को प्रिय वह व्यक्ति है जो अल्लाह के परिवार के साथ भलाई से पेश आये।"

(४) "नि:सहाय और निर्धन लोगों की मदद के लिये दौड़-धूप करने वाला व्यक्ति उस व्यक्ति की तरह है, जो ईश्वर के मार्ग में लगा रहता है, उस व्यक्ति की तरह है जो रात भर जाग कर नमाज़ पढ़ता है और थकता नहीं या उस रोज़ेदार की तरह है, जो लगातार रोज़े रखता है और रोज़ों का सिलसिला कभी नहीं तोड़ता।"

(५) एक विस्तृत हदीस का सारांश है—क़ियामत के दिन अल्लाह तआला मनुष्यों से पूछेगा कि हे आदम के बेटे ! मैं बीमार था, लेकिन तूने मेरी बीमारपुर्सी नहीं की। बन्दा कहेगा— मालिक तू तो बीमारी से मुक्त है, तुझे कैसे बीमारी हो सकती है। अल्लाह कहेगा— मेरा अमुक बन्दा बीमार था, तू अगर उसके पास जाता तो मुझे पाता। इसी प्रकार अल्लाह कहेगा— मैं भूखा था, तूने खाना नहीं खिलाया, मैं निर्वस्त्र था

तूने कपड़ा नहीं पहनाया इत्यादि। बन्दा हर प्रश्न के जवाब में कहेगा कि तू इन चीज़ों से पाक है। तो अल्लाह कहेगा— मेरा अमुक-अमुक बन्दा पीड़ित था, लेकिन तूने उनकी ओर ध्यान नहीं दिया। यदि तू उसके पास जाता तो वहां मुझे पाता। इस हदीस से स्पष्ट है कि दीन-दुखियों की सेवा की इस्लाम में कितनी अहमियत है।

(६) "जमीन वालों पर रहम (दया) करो, आसमान वाला तुम पर रहम करेगा।"

पशु-पक्षियों के प्रति दया-भाव

इस्लाम दया और प्रेम का धर्म है, यहां तक कि पशु-पक्षियों के प्रति भी दया-भाव रखने की प्रेरणा दी गयी है। अकारण उनको मारना, तकलीफ़ देना या क़त्ल करना गुनाह है। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने जानवरों और पशु-पक्षियों के साथ बुरे व्यवहार करने से मना किया है। इस संबंध में कुछ हदीसें यहां प्रस्तुत की जाती हैं:—

(१) एक बार आप (सल्ल०) अपने एक सहयोगी के बाग़ गये। वहां एक ऊंट था। जब उस ऊंट ने आपको देखा तो आपको स्पर्श करके उसने ऐसी दर्दभरी आवाज़ निकली जैसे बच्चे के बिछुड़ने के समय ऊंटनी आवाज़ निकालती है और उसकी आंखों से आंसू बहने लगे। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) उसके और क़रीब हुए। आप (सल्ल०) ने प्रेम से उसके कनपटी पर अपना हाथ फेरा। वह ऊंट चुप हो गया। तब आपने पूछा— यह किसका ऊंट है? इसका मालिक कौन है? एक नौजवान आया और बोला— यह मेरा ऊंट है। आप (सल्ल०) ने कहा कि इस बेचारे बेज़ुबान जानवर के बारे में तुम उस अल्लाह से नहीं डरते जिसने तुमको उसका मालिक बनाया है। इसने मुझसे शिकायत की है कि तुम उसको भूखा रखते हो और ज़्यादा काम लेकर इसको बहुत दुःख पहुंचाते हो।

(२) एक बार अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के कुछ साथी आपके साथ सफ़र में थे कि आप (सल्ल०) के दो साथियों ने एक चिड़िया के छोटे-छोटे दो बच्चों को पकड़ लिया। वह चिड़िया आई और उनके सिर पर मंडराने लगी। इतने में आप (सल्ल०) आ गये। आप (सल्ल०) ने पूछा— किसने उसके बच्चे को पकड़ कर उसे सताया है। इसके बच्चे इसको वापस कर दो।

कुछ लोगों ने चूहियों के गोह (बिल) में आग लगा दी थी तो आप (सल्ल०) ने कहा— "आग के पैदा करने वाले ईश्वर के सिवा किसी को किसी जीव को आग से जलाने का कोई अधिकार नहीं।"

(३) आप (सल्ल०) ने कहा— "एक बेदर्द और बेरहम औरत इसलिये नरक में डाल दी गयी कि उसने एक बिल्ली को बांध कर रखा। न तो उसे कुछ खाने को दिया और न उसे छोड़ा कि वह ज़मीन के कीड़े-मकोड़ों से अपना भोजन प्राप्त कर लेती।"

(४) आप (सल्ल०) ने बनी इसराईल के एक व्यक्ति की कहानी सुनाते हुए कहा— "एक व्यक्ति एक रास्ते से जा रहा था। उसे अत्यन्त प्यास लगी, चलते-चलते उसे एक कुआं मिला। वह उसके अन्दर उतरा और पानी पीकर ऊपर आया तो उसने देखा कि एक कुत्ता, जिसकी जीभ बाहर निकली हुई है, प्यास के मारे कीचड़ चाट रहा है। उस आदमी ने अपने दिल में कहा कि इस कुत्ते को भी प्यास की वैसी ही तकलीफ़ है जैसी कि मुझे थी। वह उस पर रहम खाकर फिर कुएं में उतरा और अपने चमड़े के मोज़े में पानी भर कर उसको उसने अपने मुंह से थामा और कुएं से निकल आया और उस कुत्ते को पानी पिला दिया। अल्लाह ने उसकी इस दयालुता और मेहनत का सम्मान करते हुए इस कर्म पर उसको बख़्श दिया।" इस घटना को सुनकर आप (सल्ल०) के साथियों ने पूछा— "हे अल्लाह के रसूल ! क्या जानवरों की तकलीफ़

दूर करने में भी हमारे लिये पुण्य है ?" आप (सल्ल०) ने कहा— "हां, हर सजीव और जानवरों के दुःख दूर करने का सवाब है।"

इसी प्रकार ऐसी अनेक हदीसें हैं, जिनमें जानवरों को उनकी शक्ति से ज़्यादा काम न लेने, उनको उचित खाना-पानी देने, उन पर अधिक बोझ न डालने तथा अकारण और निर्दयतापूर्वक उन्हें मार डालने आदि से सख़्ती से मना किया गया है।

कुछ जानवरों का मांस खाना हलाल किया है। अतः इस प्रकार के जानवरों को ज़िब्ह करने की अनुमति तो है, परन्तु ऐसा करते समय उनको कम-से-कम तकलीफ़ हो, इसकी ताकीद की गयी है। जानवरों का मांस खाना जीव-हत्या नहीं है, क्योंकि यह प्रकृति का विधान है। ईश्वर ने दुनिया में बहुत-सी चीज़ें पारस्परिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर पैदा की है। उसने जीवों को एक-दूसरे का आहार बनाया। संस्कृत में एक वाक्य है— **"जीवः जीवस्य भोजनम् !"** (जीव ही जीव का आहार है।) संसार की प्रत्येक वस्तु एक अर्थ में सजीव है। चाहे वह फल और दूध हो या सब्ज़ी। कुछ लोगों का यह मानना कि मांस-मछली खाने से पशुत्व की प्रवृति उत्पन्न होती है, सही नहीं है। भारतीय धर्म-ग्रन्थों से लेकर अन्य सभी धर्म-ग्रन्थों और ऋषियों-मुनियों के यहां हम देखते हैं कि वे मांस-मछली खाते थे और यह चीज़ ईश्वर की भक्ति और उपासना में उनके लिए बाधक नहीं होती थी। अतः यह एक भ्रान्ति है, जिसका निराकरण जितनी जल्दी कर लिया जाय उतना ही अच्छा है। इस अन्धविश्वास ने बहुत-सी समस्याएं उत्पन्न कर दी हैं।

इस तरह इस्लाम में पालतू जानवरों और पशु-पक्षियों को मानवीय आहार घोषित किया गया है और उनके खाने में कोई पाप नहीं है। परन्तु यहां भी हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने यह शिक्षा दी कि अकारण पशु-पक्षियों का शिकार न किया जाये। किसी जानदार को दूसरे जानदार से न लड़ाया जाये, उन पर केवल मनोरंजन के लिये निशानेबाज़ी न की जाये, बल्कि भोजन के लिये जिनकी आवश्यकता हो, केवल उन्हीं को ज़ब्ह किया जाय। वह भी इस प्रकार किया जाये कि जानवर को कम-से-कम तकलीफ़ हो। जब तक वह ज़िन्दा रहे, उसके शरीर

के किसी अंग को न काटा जाये।

विभिन्न क्षेत्रों में आप (सल्ल०) के उपदेश

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा—

(१) झूठी गवाही देना उतना ही बड़ा पाप है, जितना किसी को ईश्वर का साझी मानना।

(२) सच्चा मुजाहिद (ईश्वर की राह में लड़ने वाला) वह है, जो ईश्वर की आज्ञा के पालन में स्वयं अपने मन से लड़ता है और असली मुहाजिर (अल्लाह की राह में घर छोड़ देने वाला) वह है जो उन कामों को छोड़ दे, जिन्हें अल्लाह नापसंद करता है।

(३) क़ियामत के रोज़ अल्लाह की छाया में सबसे पहले जगह पाने वाले वे लोग होंगे, जिनका हाल यह रहा है कि जब कि हक़ (सच्चाई) उनके सामने पेश किया गया तो उन्होंने मान लिया और जब भी हक़ (अधिकार) उनसे मांगा गया तो उन्होंने खुले दिल से दे दिया और दूसरों के संबंध में उन्होंने वही फ़ैसला किया जो वे स्वयं अपने मामले में करते हैं।

(४) तुम छः बातों की ज़मानत दो, मैं तुम्हें जन्नत की ज़मानत देता हूं—बोलो तो सच बोलो, वायदा करो तो पूरा करो, अमानत में पूरे उतरो, व्यभिचार से दूर रहो, बुरी नज़र से बचो और ज़ुल्म से हाथ रोके रहो।

(५) धोखेबाज़, कंज़ूस और एहसान जताने वाला आदमी जन्नत में नहीं जा सकता।

(६) जो शरीर हराम कमाई से पला हो, उसके लिये जहन्नम की आग ही बेहतर है। वह जन्नत में नहीं जा सकता।

(७) जिस व्यक्ति ने कोई ख़राब वस्तु बेची और ख़रीददार को उसकी त्रुटि

से अवगत नहीं कराया, उस पर अल्लाह क्रुद्ध होता है और फ़रिश्ते उस पर लानत भेजते हैं।

(८) कोई व्यक्ति चाहे कितनी ही बार जीवन प्राप्त करे और अल्लाह की राह में जान देता रहे, परन्तु वह जन्नत में नहीं जा सकता, अगर उसने जो ऋण लिया हो उसको चुकाया न हो।

(९) एक व्यक्ति ६० वर्ष ख़ुदा की इबादत करता है और मरते समय एक वसीयत में हक़दार का हक़ मार कर अपने आपको नरक में पहुंचा देता है।

(१०) वह व्यक्ति जन्नत में नहीं जायेगा, जो अपने अधीनस्थ लोगों से कठोरता का बर्ताव करे। मैं तुम्हें बताऊं कि रोज़े, ख़ैरात और नमाज़ से बढ़कर क्या चीज़ है, वह है बिगाड़ की स्थिति में सुलह करा देना। लोगों के आपसी सम्बन्ध में बिगाड़ पैदा करना वह कार्य है, जो सभी अच्छाइयों पर पानी फेर देता है।

(११) वास्तव में निर्धन वह है, जो क़ियामत के दिन ईश्वर के सामने इस हाल में उपस्थित हुआ कि उसके साथ नमाज़, रोज़े, ज़कात सब कुछ थे, मगर वह किसी व्यक्ति को गाली देकर आया था, किसी पर लांछन लगा कर आया था, किसी का माल मार कर आया था, किसी की हत्या की थी, किसी को मारा-पीटा था। फिर अल्लाह ने उसकी एक -एक नेकी (पुण्य) उन मज़लूमों (जिन पर अत्याचार किया गया था) में बांट दी और मज़लूमों का एक-एक क़ुसूर उसके हिसाब में डाल दिया और उसके पास कुछ न रहा जो उसे नरक से बचाये।

(१२) जो व्यापारी मूल्य-वृद्धि के उद्देश्य से माल रोके रखे, वह बड़ा पापी है।

(१३) जिस व्यक्ति ने चालीस दिन अनाज इसलिये रोके रखा कि मूल्य में

वृद्धि हो जाय तो ईश्वर का उससे और उसका ईश्वर से कोई सम्बन्ध नहीं। फिर अगर वह उस अनाज को ख़ैरात भी कर दे, तो माफ़ नहीं किया जायेगा।

(१४) जिसका कोई भरण-पोषण करने वाला नहीं, उसके भरण-पोषण का ज़िम्मेदार राज्य है।

(१५) यदि कोई व्यक्ति माल छोड़ जाये, तो वह माल उसके घर वालों के लिये है और यदि वह व्यक्ति किसी को बेसहारा छोड़ जाये, तो उसकी ज़िम्मेदारी मुझ (सरकार) पर है।

(१६) मज़दूर की मज़दूरी उसका पसीना सूखने से पहले चुका दो।

(१७) अल्लाह कहता है कि क़ियामत के दिन मैं तीन आदमियों का दुश्मन हूंगा, एक वह जिसने मेरा नाम लेकर वादा किया और उससे फिर गया और दूसरा वह जिसने किसी स्वतंत्र व्यक्ति को बेचकर उसकी क़ीमत खाई और तीसरा वह जिसने मज़दूर से पूरी मेहनत ली और फिर उसकी मज़दूरी अदा नहीं की।

(१८) मज़दूर की मज़दूरी निर्धारित किये बिना उसको काम पर न लगाया जाए।

(१९) घूस लेने और देने वाले पर लानत है। एक रिवायत में है कि वे नरक में जायेंगे और एक दूसरी रवायत में है– "कोई क़ौम ऐसी नहीं है जिसमें घूस फैल जाये और उसको भय और आशंका न घेर ले।"

(२०) सरकारी कर्मचारियों को भेंट देना भी एक प्रकार की घूस है। एक दूसरी रिवायत में है– "किसी व्यक्ति ने किसी की सिफ़ारिश की, उसे भेंट दिया गया और उसने स्वीकार कर लिया तो निश्चित रूप से वह ब्याज के दरवाज़ों में से एक बड़े दरवाज़े में प्रवेश कर गया।"

(२१) सबसे बुरा भोज वह है, जिसमें केवल धनवानों को बुलाया जाय

और निर्धन लोगों को छोड़ दिया जाये।

(२२) सबसे बुरा व्यक्ति वह है, जो अपनी पत्नी के साथ किए गए अपने गुप्त व्यवहारों को लोगों के समक्ष खोलता है।

(२३) पूछा गया– माता-पिता का उनकी सन्तान पर क्या हक़ है? आप (सल्ल०) ने जवाब दिया– "वे तुम्हारी जन्नत और जहन्नम हैं।" अर्थात् अगर तुमने उनकी सेवा की, उनको ख़ुश रखा तो जन्नत में जाओगे और अगर उनको छोड़ दिया और दुःख पहुंचाया तो नरक के पात्र होओगे।"

एक दूसरी हदीस में है कि बाप जन्नत का दरवाज़ा है और माँ के क़दमों के तले जन्नत है। जो व्यक्ति अपने माता-पिता का सेवा-सत्कार न करे, वह तो बहुत बड़ा अभागा है।

इस्लाम की शिक्षा यह है कि माँ-बाप को न झिड़को, न बुरा-भला कहो, बल्कि उनके साथ अच्छे-भले तरीक़े से पेश आओ।

(२४) तुम लोग अपनी औलाद के साथ दया, प्रेम और आदर का व्यवहार करो और उनको अच्छी शिक्षा-दीक्षा दो।

(२५) पत्नी के साथ दया एवं करुणा का व्यवहार करो, तो अच्छा जीवन बीतेगा।

(२६) हे लोगो! अल्लाह की अवज्ञा से बचो और रोज़ी की खोज में ग़लत तरीक़ा मत अपनाओ, क्योंकि कोई व्यक्ति उस समय तक नहीं मर सकता जब तक अपनी पूरी रोज़ी प्राप्त न कर ले। हाँ, यद्यपि उसके मिलने में कुछ देरी हो सकती है, तो अल्लाह से डरते रहना और रोज़ी की तलाश में अच्छा तरीक़ा अपनाना। हलाल रोज़ी प्राप्त करो, हराम के क़रीब भी न जाओ।

(२७) एक व्यक्ति को लोगों ने देखा कि रोज़ी की प्राप्ति में बहुत दौड़-धूप कर रहा है। लोगों ने कहा– अच्छा होता वह ईश्वर की राह में मेहनत

करता। आप (सल्ल०) ने कहा—अगर वह अपने छोटे बच्चों के भरण-पोषण के लिये दौड़-धूप कर रहा है, तो यह अल्लाह की राह में ही गिना जायेगा।

(२८) जरूरतमंद को क़र्ज़ देना बड़े सवाब का काम है। अत: आपने कहा— "हर क़र्ज़ सदक़ा है।"

क़र्ज़ देकर एक व्यक्ति किसी ज़रूरतमंद को चोरी, सूद और भीख मांगने आदि से बचा लेता है। क़र्ज़ देते समय इतनी मुहलत अवश्य देनी चाहिये कि वह स्वयं लौटा दे। सामर्थ्य के बाद क़र्ज़ नहीं लौटाना बहुत बड़ा पाप है।

(२९) अत्याचारी शासक के सामने हक़ की बात कहना सबसे बड़ा जिहाद है।

(३०) एक बार आपके घर कुछ लोग आये और आपकी पत्नी हज़रत आइशा से आपकी इबादत का हाल पूछा, जिसको सुनकर उन्होंने कहा कि आप (सल्ल०) तो अल्लाह के रसूल हैं। आपके सारे गुनाह माफ़ हैं, लेकिन हम लोग तो मामूली लोग हैं। अत: इतने से हमारा काम नहीं चल सकता। इसलिये एक ने कहा कि वह हमेशा रोज़ा रखेगा। दूसरे ने कहा कि वह रात भर नमाज़ पढ़ेगा, बिल्कुल नहीं सोएगा और तीसरे ने कहा कि वह कभी विवाह नहीं करेगा। जब आप घर लौटे तो आपको बताया गया कि कुछ लोग आये थे और फ़लां-फ़लां बातें कह रहे थे। आप (सल्ल०) तुरन्त बाहर निकले। वे लोग आपकी मस्जिद में थे। आपने उनको संबोधित करते हुए कहा—मैं गुनाहों से बचने और ईश्वर के आज्ञापालन में तुमसे कहीं आगे हूं। लेकिन मैं रोज़े भी रखता हूं और बिना रोज़े के भी रहता हूं। नमाज़ भी पढ़ता हूं और सोता भी हूं और मैंने विवाह भी किया है। यह मेरा आचरण है, जो इन बातों का अनुसरण नहीं करता, उसका मुझसे कोई सम्बन्ध नहीं।

(३१) ज्ञान प्राप्त करो, पालने से लेकर अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक।

(३२) जिसके पास तीन वक़्त का खाना हो और फिर भी वह भीख मांगता है, तो वह अपने पेट को आग से भरता है।

(३३) लेने वाला हाथ देने वाले हाथ से हमेशा नीचे होता है।

(३४) अपनी मेहनत की कमाई से प्राप्त रोज़ी से अच्छी कोई रोज़ी नहीं।

(३५) आप (सल्ल०) ने अच्छे और बुरे लोगों को एक उदाहरण द्वारा इस प्रकार समझाया—एक क़िश्ती है, जिसमें कुछ लोग ऊपर की मंज़िल पर सवार हैं और कुछ लोग नीचे की मंज़िल पर। ऊपर वालों की मिसाल अच्छे लोगों की है। और नीचे वाले बुरे लोग हैं। पीने का पानी ऊपर वाली मंज़िल में है। अत: नीचे वाले को पानी लाने के लिये बार-बार ऊपर जाना होता है, जिससे ऊपर वालों को तकलीफ़ होती है। अब नीचे वालों ने अपनी और ऊपर वालों की कठिनाई को दूर करने के लिए क़िश्ती में छेद कर देना चाहा। आपने फ़रमाया—अगर नीचे वालों को ऊपर वालों ने इससे नहीं रोका तो दोनों डूब जाते और यदि उनका हाथ पकड़ लेते तो उनके साथ अपने आपको भी बचा लेते।

(३६) जिसके पास अतिरिक्त सवारी हो वह उसे उसको दे दे, जिसके पास सवारी न हो और जिसके पास रास्ते का अतिरिक्त ख़र्च हो, वह उस व्यक्ति को दे दे जिसके पास न हो।

(३७) जिसके पास दो आदमियों का खाना हो वह तीसरे व्यक्ति को मेहमान बनाकर ले जाये, जिसके पास चार का हो वह पांचवें या छठे व्यक्ति को ले जाये।

(३८) हे मानव! तेरे लिये ज़रूरत से ज़्यादा माल का ख़र्च कर देना बेहतर है। उसको रोके रखना बुरे परिणाम उत्पन्न करता है।

(३९) ईश्वर की अवज्ञा में किसी का आज्ञापालन न करो ।

(४०) बनी इसराईल में जब कोई सम्मानित व्यक्ति अपराध करता तो लोग उसे छोड़ देते और साधारण व्यक्ति को सज़ा देते । एक बार बड़े घराने की एक औरत ने चोरी की, तो बड़े घराने वालों ने चाहा कि उसे सज़ा न मिले । इस पर आप (सल्ल०) ने कहा—अगर मुहम्मद (सल्ल०) की बेटी फ़ातिमा भी चोरी करती तो मैं उसका हाथ काट देता ।

(४१) जो अपने माल (सम्पत्ति) की रक्षा करते हुये मारा जाय वह शहीद है ।

(४२) जिस किसी ने दूसरे की ज़मीन का थोड़ा-सा भाग भी नाजायज़ कब्ज़ा कर लिया, तो सातों ज़मीनों का तौक़ उसके गले में डाल दिया जायेगा ।

(४३) तीन चीज़ों में सबके सब सहभागी हैं: पानी, घास और आग ।

(४४) बेकार पड़ी हुई भूमि अल्लाह और उसके रसूल (सल्ल०) की सम्पत्ति (सार्वजनिक सम्पत्ति) है, उसके बाद वह तुम्हारी है । अतएव जो व्यक्ति बेकार पड़ी भूमि को लाभकारी बना ले, वह उसकी हो जायेगी । परन्तु अगर तीन साल तक वह लाभकारी न बना सके तो वह इस अधिकार से वंचित हो जायेगा ।

(४५) ऐसा नहीं हो सकता कि कोई व्यक्ति हराम माल कमाये और उसमें से दान-पुण्य करे तो वह ईश्वर के यहां स्वीकार हो या उसमें से ख़र्च करे तो उसमें बरकत हो सके । वह ऐसे माल को अगर अपने पीछे छोड़ जाता है तो यह उसके लिये नरक में ले जाने वाली चीज़ होगी । अल्लाह बुराई को बुराई के द्वारा नहीं, बल्कि बुराई को अच्छाई के द्वारा ही मिटाता है । अपवित्र वस्तु अपवित्रता को दूर नहीं कर

(४६) आप (सल्ल०) ने सूद खाने वाले, खिलाने वाले, उसका दस्तावेज़ लिखने वाले, उस पर गवाही देने वाले सब पर लानत भेजी है और कहा कि ये सब बराबर हैं ।

(४७) ईश्वर पवित्र है, पवित्रता को पसंद करता है । साफ़- सुथरा है, सफ़ाई-सुथराई को पसंद करता है । स्वयं कृपालु है, कृपा तथा अनुराग उसे प्रिय है, दाता है और उदारता उसे पसंद है । लोगो ! तुम भी अपने शरीर को साफ़-सुथरा रखो और यहूदियों की तरह गंदे न हो जाओ ।

(४८) जो चाहो खाओ, जो चाहो पहनो, शर्त यह है कि अपव्यय और घमंड—इन दोनों चीज़ों से बचे रहो ।

(४९) कोई क़ौम ऐसी हो, जिसमें गुनाह खुलेआम किया जाता हो और लोग उस स्थिति को बदलने का सामर्थ्य भी रखते हों, फिर भी न बदले तो अल्लाह की ओर से आम सज़ा आते देर नहीं लगती ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इस्लाम सम्पूर्ण जीवन की ईश्वरीय व्यवस्था को पेश करता है । यह व्यवस्था किसी विशेष वर्ग या समुदाय के लिए नहीं है, बल्कि सारे इन्सानों के लिए है ।

—:०:—